CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

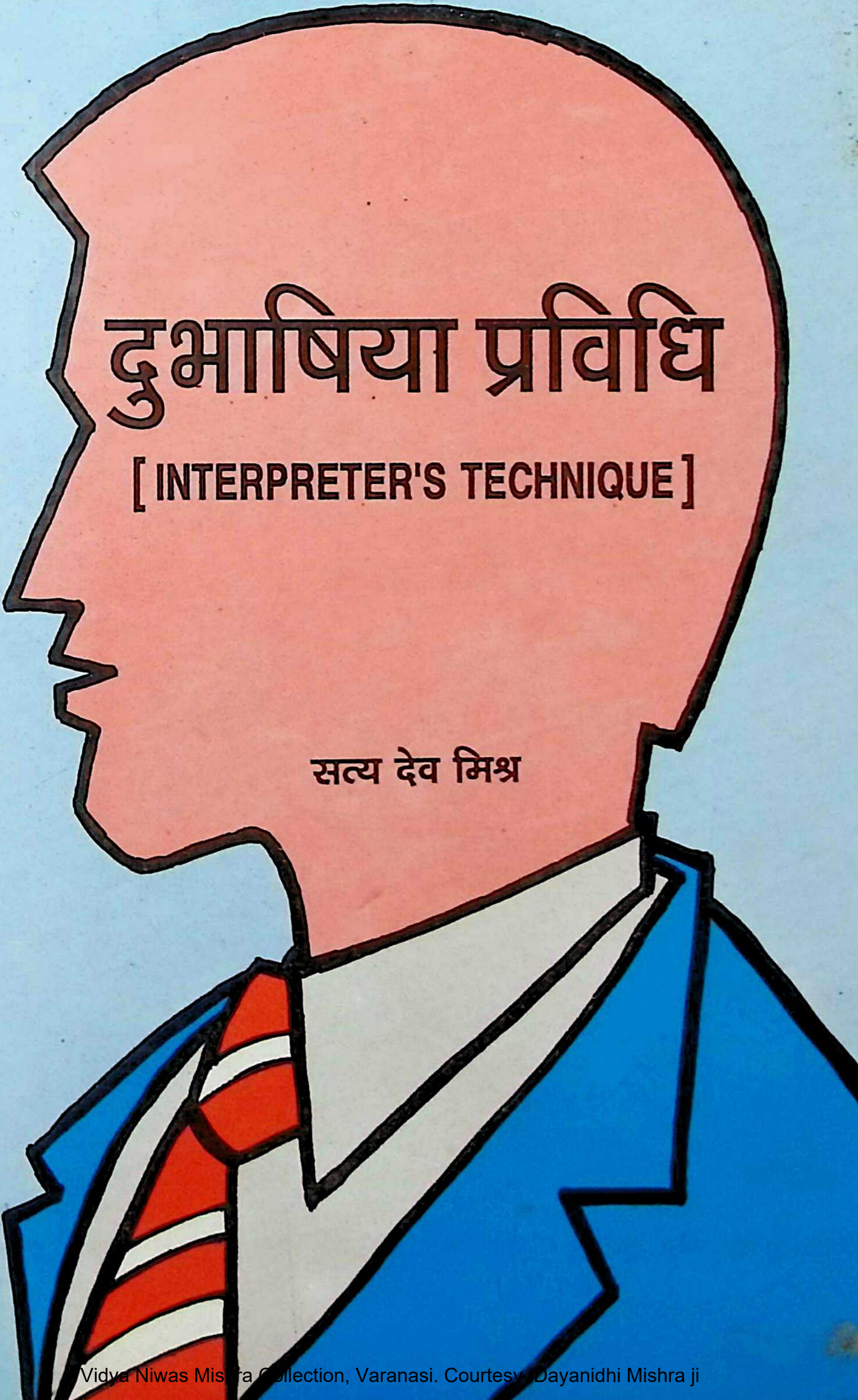

दुभाषिया प्रविधि

[INTERPRETER'S TECHNIQUE]

सत्य देव मिश्र

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy: Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनुवाद के विशिष्ट प्रसंग में त्वरित या तत्काल भाषान्तरण, आशु अनुवाद, सारानुवाद, दुभाषिया अनुवाद जैसे कई समानार्थी शब्दों का प्रयोग किया जाता है। किन्तु इनमें सूक्ष्म अन्तर भी है। अनुभवी एवं विद्वान मनीषी डॉ. सत्यदेव मिश्र ने इनका सूक्ष्मान्तर स्पष्ट करते हुए, इनकी कार्य-पद्धति पर पर्याप्त प्रकाश डाला है।

वस्तुतः दुभाषिया-कर्म या आशु अनुवाद आधुनिक युग की सर्वोपयोगी आवश्यकता है। तत्काल भाषान्तरण की एक विशिष्ट प्रक्रिया और प्रविधि है। इस तकनीक और कला को जाने बिना कोई अच्छा अनुवादक भी दुभाषिया की भूमिका का निर्वाह सफलतापूर्वक नहीं कर सकता। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह पुस्तक तैयार की गई है।

यह कहना यहाँ समीचीन है कि सफल दुभाषियों की आज महती आवश्यकता है। विश्व मैत्री, विश्व व्यापार, पर-राष्ट्र-नीति, विधि, न्याय-प्रशासन, संसद-विधान मण्डलों के साथ ही उद्योग, शिक्षा और स्वास्थ्य-संबंधी क्षेत्रों में, विचार-विनिमय में, दुभाषिया की गुणात्मक भूमिका रहती है। हिन्दी में इस प्रकार का कोई स्वतंत्र ग्रंथ अब तक नहीं लिखा गया है। इस अभाव की पूर्ति तो यह पुस्तक करेगी ही साथ ही स्वरोजगार के मार्ग भी प्रशस्त करेगी।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

2.2

परमश्रद्धेय गुरुवर प्रोफेसर विद्यानिवास मिश्र — को —

सप्रणाम, सादर

सिद्धि मिश्र

2-5-2001

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

दुभाषिया प्रविधि

(Interpreter's Technique)

सत्य देव मिश्र
~~रीडर~~, प्रो०
हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा
विभाग
लखनऊ विश्वविद्यालय

भारत प्रकाशन
लखनऊ

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रकाशक :

भारत प्रकाशन
17, अशोक मार्ग,
लखनऊ – 226001

ISBN - 81-7323-115-5

मूल्य : 80-00 / संस्करण : प्रथम / वर्ष : 2000 /
लेज़र टाइपसेटिंग : कम्पोजिंग प्वाइंट, विश्वास खंड, गोमतीनगर, लखनऊ /
मुखावरण : नरेन्द्र त्यागी
मुद्रक : शिवा आर्ट प्रेस एम-112 नवीन शाहदरा दिल्ली - 110032

Dubhashiya Pravidhi (Interpreter's Technique)
by : Dr. S.D.Mishra
Price : Rs. 80.00

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समर्पण

सुप्रसिद्ध विधि–वेत्ता, साहित्य–मर्मज्ञ
श्रद्धेय पं० केशरी नाथ त्रिपाठी
विधान सभा अध्यक्ष, उ०प्र०
को
सादर–समर्पित

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पुरोवाक्

सुप्रसिद्ध विद्वान समीक्षक आई.ए.रिचर्ड्स की यह उक्ति "अनुवाद इस ब्रह्माण्ड के सबसे कठिन क्रिया व्यापारों में से एक है। अनुवाद कार्य की जटिलता को रेखांकित करता है। वस्तुतः अनुवाद कार्य यदि जटिल है तो दुभाषिया कर्म जटिलतर। त्वरित भाषान्तर या तत्काल भाषान्तरण या आशु अनुवाद और दुभाषिया तकनीकी आदि सभी शब्द अपनी अर्थवत्ता में एक ही सिक्के के कई पहलू हैं परन्तु उनमें सूक्ष्म भेद भी है। त्वरित भाषान्तर अति शीघ्रता में किया गया भाषागत रूपान्तर है, तत्काल भाषान्तरण तुरंत प्रस्तुत किया जाने वाला अनुवाद है, आशु अनुवाद के साधन–उपकरणों के अभाव में प्रतिव्युत्पन्नमति से किया गया अनुवाद है, किन्तु दुभाषिया का कार्य उक्त सभी दृष्टियों से कुछ भिन्न होता है। यद्यपि दुभाषिया कार्य के लिए प्रयुक्त उक्त सभी पर्यायों का समाहार 'इन्टरप्रिटर्स टैक्नीक' में हो जाता है तथापि दुभाषिया कर्म में दुभाषिया की व्यस्टि चेतना। कहीं भी तिरोभूत नहीं होती। आशु अनुवाद, तत्काल भाषान्तरण, आदि त्वरित भाषान्तर का कार्य मशीन भी कर सकती है। किन्तु दुभाषिया कर्म व्यक्ति सापेक्ष है। अतः दुभाषिया की क्षमता, योग्यता विषय ज्ञान और बहुज्ञता आदि की चर्चा इस पुस्तक में की गई है।

दुभाषिया मूल वक्ता के वक्तव्य की आर्थी संरचनाओं की जटिलताओं से गर्भित आशय का भाषान्तरण करता है। दुभाषिया को अर्थ के प्रत्येक स्तर को दृष्टि पथ में रखकर कथन का समीकृत अर्थ ग्रहण करना और उसे त्वरित गति और प्रवाह के साथ लक्ष्य भाषा में रूपान्तरित करना होता है जो एक परकाया प्रवेश जैसी जटिल विद्या है। दुभाषिया का कार्य जटिलताओं के साथ ही चुनौतियाँ भरा भी होता है। ये चुनौतियाँ विषय की जटिलता, वक्ता की दोषपूर्ण भाषा–शैली, यंत्रों, (माइकादि) की गड़बड़ी और भाषा ज्ञान तथा वक्ता की बहुज्ञता संबंधी भी हो सकती हैं। इन सारी चुनौतियों का सफलतापूर्वक सामुख्य करने वाला दुभाषिया ही सफलता के सोपान चढ़ता है और श्रोताओं का कण्ठहार बनता है।

वस्तुतः दुभाषिया की प्रविधि पर अब तक हिन्दी में तो किसी स्वतंत्र गंथ का निर्माण हुआ ही नहीं है, अंग्रेजी में भी इस प्रकार का कार्य देखने में नहीं आया। इस दृष्टि से यह अभिनव प्रयास है। विश्वास है कि पाठकगण उदारतापूर्वक इस पुस्तक का स्वागत करेंगे। अस्तु।

इस कृति की रचना के लिए मेरे गुरुवर प्रोफेसर डॉ. सूर्य प्रसाद दीक्षित, पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय ने निरंतर प्रोत्साहित किया और इंगित भी किया कि हिन्दी में ऐसी पुस्तक नहीं लिखी गई है इस अभाव को भरो।' वस्तुतः गुरुवर अकादमिक उत्कर्ष के चिरकायी रहे हैं। उन्हीं की प्रेरणा, कामना और प्रोत्साहन आज फलित हुआ है। मन गद्–गद् है। उन्हें बार–बार प्रणाम।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पुस्तक प्रकाशन में मेरे अग्रज डॉ. रामाश्रय जी सविता ने अथक श्रम किया है। मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ। पाण्डुलिपि तैयार करने में पत्नी डॉ. (श्रीमती) कल्पना मिश्र, एम.एससी., पीएच.डी. तथा चि. कल्प एवं चि. संकल्प ने भी समय–समय पर सहायता की है उन्हें बार–बार स्नेह। मेरे शिष्य श्री जगत सिंह कठायत ने समय–समय पर पुस्तकें जुटाने में सहायता की है, उन्हें साधुवाद।

अंत में मैं अपने प्रकाश श्री वीरेन्द्र बाहरी जी को भी धन्यवाद देता हूँ जिनके सहयोग से पुस्तक सुधी पाठकों तक पहुँच सकी है।

डॉ. सत्यदेव मिश्र

20 मई, 1999
18, विश्वविद्यालय आवास
फैजाबाद रोड,
लखनऊ विश्वविद्यालय
लखनऊ–226020

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनुक्रम

		पृष्ठ सं०
(अ)	**दुभाषिया प्रविधि**	**1-64**
(i)	आशु अनुवाद : पृष्ठभूमि	3
(ii)	आशु अनुवाद : सीमाएँ	5
(iii)	दुभाषिया की योग्यताएँ	[redacted]
(iv)	अनुवाद के सिद्धान्त और आशु अनुवाद	12
(v)	आशु अनुवाद की प्रक्रिया	17
(vi)	आशु अनुवाद का विकास और प्रकार	32
(vii)	अनुवाद और आशु अनुवाद : व्यावहारिक चरण	35
(viii)	दुभाषिया–प्रविधि : समस्याएँ और समाधान	56
(ix)	संकेतन विज्ञान और देह भाषा : आशु अनुवाद का एक प्रसंग	62
(ब)	**अन्य अलक्षित आयाम**	**65-95**
(x)	सांस्कृतिक प्रतिबिम्बन और समन्वय में अनुवाद की भूमिका	65
(xi)	सांस्कृतिक संदर्भों का अंतरण	71
(xii)	भाषाओं के संस्कृतिमूलक तत्त्वों का अंतरण	79
(xiii)	तुलनात्मक साहित्याध्ययन और अनुवाद	84
(xiv)	On Translating Creative Literature	90

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आशु अनुवाद

अनुवाद एक जटिल कर्म है और आशु अनुवाद अथवा दुभाषिया कर्म जटिलतर। आशु अनुवाद (Interpretative translation) एक प्रकार की परकाया–प्रवेश की विद्या है, जिसमें आशु अनुवादक (दुभाषिया) को वक्ता की मात्र भाषा ही नहीं समझनी होती वरन् उसके वक्तव्य के मूल अभिप्राय, उसके अभीष्ट अर्थ, उसके अंतर्मन की वस्तुगत एवं भावगत स्थिति को समझकर लक्ष्यभाषा में तुरंत अनुवाद करना होता है। वक्ता की वक्तृत्व शैली, उसकी आंगिक चेष्टाओं, उसके हास–परिहास का यथावत् अनुकरण करते हुए भाषान्तरण प्रस्तुत करना ही एक अच्छे दुभाषिया की कसौटी मानी जाती है। वक्ता का अभिप्रेत अर्थ अपनी सम्पूर्ण वक्तृता के साथ, वाक् शिल्पगत समग्र भंगिमाओं के साथ प्रस्तुत करना ही दुभाषिया का ध्येय होता है, होना भी चाहिए।

उक्त दृष्टि से दुभाषिया मूल वक्तव्य की आर्थी संरचनाओं की जटिलताओं से गर्भित आशय भाषान्तरित करता है। दुभाषिया को अर्थ के प्रत्येक स्तर को दृष्टिपथ में रखकर कथन का समीकृत अर्थ ग्रहण करना और उसे त्वरित गति और प्रवाह के साथ लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करना होता है। यह एक जटिल प्रक्रिया है। अर्थ के सूक्ष्म स्तर होते हैं। भारतीय काव्यशास्त्र में शब्द–शक्तियों (अभिधा, लक्षणा, व्यंजना) के माध्यम से तथा पाश्चात् काव्यशास्त्र में अर्थ मीमांसा (Meaning of Meaning) द्वारा शब्दार्थ की बारीकियों को रेखांकित किया गया है। कदाचित् इसी दृष्टि से हमारे यहाँ 'शब्द' को ब्रह्म कहा गया है क्योंकि शब्द मानव–चेतना के भौतिक स्तर का अतिक्रमण कर सूक्ष्म आधिभौतिक स्तर को संस्पर्श देता है। भाषा का लक्षणा–व्यंजनाप्रधान प्रयोग और उसका त्वरित भाषान्तरण दुभाषिया की सबसे बड़ी चुनौती होती है।

'अर्थ मीमांसा' पर प्रकाश डालते हुए रिचर्ड्स ने अपने ग्रंथों[1] में अर्थ सम्प्रेषण के चार सूक्ष्म स्तर माने हैं यथा (Sense) वाच्यार्थ, Feeling (भाव/भावार्थ), Tone (स्वर/लहजा), Intention (अभिप्राय)।वस्तुतः 'सेन्स' शब्द की सामान्य परिचायक शक्ति है, 'फीलिंग' से वक्ता के भावोद्गार प्रकट होते हैं। 'टोन' से लेखक अथवा वक्ता का श्रोता/पाठक के प्रति दृष्टिकोण प्रकट होता है और 'इन्टेशन' से उसका मूलाभिप्राय। वक्ता की आंगिक चेष्टाएँ तथा स्वराघात और बलाघात उसके अभिप्रेत अर्थ को स्पष्ट करते हैं। कहना न होगा इस भाषागत व्यापार की सूक्ष्म जानकारी के बिना दुभाषिया अपना काम सही तौर पर नहीं कर सकता। अतः दुभाषिया–कर्म अत्यंत जटिल एवं चुनौतियों भरा होता है और साधारण अनुवादक से कहीं अधिक योग्यता की अपेक्षा रखता है।

---

1. The Meaning of Meaning, The Philosophy of Rhetoric, Practical Criticism.
-I.A. Richards

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उदाहरण के लिए शब्दार्थगत व्यंजना (ध्वनि) को समझे बिना अंग्रेज कवि राबर्ट फ्रास्ट की इन पंक्तियों का सही भाषान्तर कर पाना सम्भव न होगा।

The Woods are lovely, dark and deep,
But I have promises to keep,
And miles to go before I sleep,
And miles to go before I sleep,

–Robert Frost

सघन गहरी काली वन सुषमा,
किन्तु वायदे पूरे करने की मेरी कामना,
और सोने से पूर्व मीलों चलने की साधना,
और सोने से पूर्व मीलों चलने की साधना।

उक्त काव्यानुवाद से कविता का वाच्यार्थ तो स्पष्ट होता है किन्तु ध्वन्यार्थ रिचर्ड्स के शब्दों में कहें तो 'इंटेन्शन' रूपांतरित नहीं होता। कविता का व्यंग्यार्थ (इंटेंशन) निम्नलिखित अनुवाद से सुस्पष्ट होता है–

सघन वन की गहरी काली सम्मोहक हरीतिमा,
किन्तु जीवन में कुछ कर गुजरने की संकल्पना,
और चिर निद्रा से पूर्व धीर पथिक बनने की कामना,
और चिर निद्रा से पूर्व धीर पथिक बनने की कामना।

वस्तुतः इन पंक्तियों में लौकिक आकर्षणों की लिप्सा से बचकर लोक धर्म के निर्वाह की ओर संकेत है। अतः इन पंक्तियों का शाब्दिक अनुवाद भ्रामक होगा। गूढ़ार्थ की ओर संकेत करने वाला अनुवाद ही यहाँ अपेक्षित है।

इस तरह दुभाषिया को भाषायी संरचनाओं और उनमें निहित सूक्ष्म व्यंजनाओं का भी तुरंत अनुवाद करना होता है, जो उसके साहित्य और भाषा के गंभीर ज्ञान पर निर्भर करता है।

भाषा प्रयोग का एक अन्य उदाहरण यहाँ उल्लेखनीय होगा। कहा जाता है कि राजस्थान के प्रथम मुख्यमंत्री स्व. जयनारायण व्यास एक बार इंग्लैण्ड के किसी राजनेता को जैसलमेर दिखाने ले गये। जैसलमेर का बाजार चावलों के ढेरों से पटा पड़ा था। यह नज़ारा देखकर अंग्रेज अवाक् रह गया। उसने पूछा कि रेगिस्तान में इतना चावल कैसे पैदा होता है? व्यास जी ने तुरंत उत्तर दिया "They grow rice on camel backs." "वे ऊँटों की पीठ पर चावल उगाते हैं।" किन्तु उक्त अंग्रेजी वाक्य में व्यतिरेक है। वास्तविक अर्थ है कि 'ये लोग ऊँटों के द्वारा रेगिस्तानी मार्ग से चावल का स्मगलिंग करते हैं।' कहना न होगा कि दुभाषिया को भाषागत इस व्यतिरेक की समझ होनी चाहिए तभी वह मूलार्थ लक्ष्य भाषा में रूपान्तरित कर सकेगा। दुभाषिया की योग्यता साधारण अनुवादक से बहुत अधिक और

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उसका भाषा ज्ञान तथा सामान्य ज्ञान असाधारण होना चाहिए। इस तरह आशु अनुवाद यहाँ कई पहलुओं से विचारणीय है।

अनुवाद और आशु अनुवाद : पृष्ठभूमि

अनुवाद / आशु अनुवाद / तत्काल भाषांतर अथवा त्वरित अनुवाद आदि कई शब्द दुभाषिया कर्म के लिए प्रयुक्त होते हैं। वस्तुतः 'अनुवाद' की जो परिभाषाएँ विद्वानों ने की हैं दुभाषिया द्वारा किया गया भाषान्तर उससे कुछ भिन्न है। 'अनुवाद' को परिभाषित करते हुए जे.सी. कैटफोर्ड लिखते हैं– "The replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language'[1]' अर्थात् 'अनुवाद' स्रोत भाषा की पाठ्य सामग्री का लक्ष्यभाषा की समतुल्य पाठ्य सामग्री द्वारा प्रतिस्थापन है।" यहाँ 'समतुल्य' शब्द महत्त्वपूर्ण भी है और अनुवादक के लिए चुनौती भरा भी।

युजीन. ए. नीडा के अंनुसार 'Translation Consists in producing in the receptor language, the closest natural equivalent to the message of the source language, first in meaning and secondly in style."[2] अर्थात् नीडा सहज निकटतम समतुल्य शब्दार्थगत अभिव्यक्तियों पर ही बल देते हैं किन्तु शतप्रतिशत समतुल्यता को स्वीकार नहीं करते। जार्ज सेन्ट्सबरी अनुवाद को – "a literary equivalent of the original" मूल का साहित्यिक समतुल्य मानते हैं। वेनेदेतो क्रोचे की दृष्टि में अनुवाद में अनुवादक मूल टेक्स्ट की कुरूपता अथवा सौन्दर्य को यथावत् अनूदित नहीं कर सकता। अनुवादक यथातथ्य प्रतिरूप बना ही नहीं सकता। वह मात्र स्रोत भाषा की आर्थी संरचनाओं के लिए लक्ष्य भाषा में समानार्थी अभिव्यक्तियों का पुनरुत्पादन भर कर सकता है।[3] वस्तुतः क्रोचे की यह मान्यता कि अनुवादक मूल 'टेक्स्ट' की अच्छाई अथवा बुराई (Beauty and ugliness) को यथावत् प्रस्तुत नहीं करता। अनुवादक या कहें तो दुभाषिया को एक कवच प्रदान करती है। आशु भाषान्तरण में अनुवादक को भाषा की ओर उतना ध्यान देने का अवकाश ही नहीं होता, वह आर्थी संरचनाओं के इर्द–गिर्द बना रहे यही महत्त्वपूर्ण होता है।

साधारणतया हर प्रकार के 'तर्जुमा' को 'अनुवाद' कहा जाता है। 'अनुवाद' के लिए भाषान्तर, भाषान्तरण, रूपान्तरण, 'अंतरण' आदि शब्द भी प्रचलित हैं।

---

1. Linguistic Theory of Translation : J.C. Catford
2. Language Structure and Translation : E.A. Naida
3. "Faithful ugliness and faithless beauty proverbial: we cannot reduce what has already possessed aesthetic form to another form also aesthetic. Unaesthetic translations are simple commentaries. But there is relative possibility of translation not as reproductions, but as productions of similar expressions." - Benedetto croce

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

किन्तु इन शब्दों की अर्थवत्ता में न्यूनाधिक सूक्ष्म अंतर है। वस्तुतः 'रूपांतरण' जिसे अंग्रेजी में 'एडेपटेशन'[1] कहते हैं वह भाषान्तरण के साथ ही विधागत रूप परिवर्तन के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है यथा, किसी कहानी या उपन्यास का रेडियो नाट्य रूपान्तरण। इसी तरह 'आशु अनुवाद' अथवा 'तत्काल भाषान्तर' या 'त्वरित भाषान्तरण', तथा अनुवाद में सूक्ष्म अंतर है। 'अनुवाद' जहाँ स्रोत भाषा के लिखित पाठ को लक्ष्य भाषा में, भाषान्तरण के विविध साधन, उपकरणों की सहायता से अंतरित करने की प्रक्रिया का नाम है, वहीं त्वरित भाषान्तर या आशु–अनुवाद स्रोत भाषा के वक्ता के अभिप्राय को लक्ष्य भाषा में तुरंत अभिव्यक्त करने की प्रज्ञात्मक प्रक्रिया है। यहाँ अनुवादक की प्रज्ञा और भाषाज्ञान का स्थान और महत्त्व सर्वोपरि है। 'भाषान्तर' या 'त्वरित भाषान्तर' अथवा 'भाषान्तरण' में अनुवाद का भाषातत्त्व प्रधान है, जो भाषावैज्ञानिक जटिलताओं से सम्पृक्त भी है जबकि आशु अनुवाद मात्र दो भाषाओं (स्रोत और लक्ष्य) के बीच मात्र 'उल्था' कर्म नहीं है वरन् स्रोत भाषा में वक्ता के अभिप्रेत अर्थ का लक्ष्य भाषा के श्रोताओं तक वाक्‌पटुता के साथ सम्प्रेषित करना भी है। अतः दुभाषिया कर्म को अनुवाद का एक प्रणालीगत प्रकार 'आशु अनुवाद' कहना सर्वथा समीचीन है। वस्तुतः 'आशु' अनुवाद' की अपनी कतिपय विशिष्टताएँ हैं, जो उसे अनुवाद के अन्य प्रणालीगत प्रकारों से अलग करती हैं। 'आशुअनुवाद' जहाँ 'शब्दार्थानुवाद' के निकट है वहीं भावानुवाद' 'छायानुवाद', 'शाब्दी अनुवाद' अथवा 'शब्दाश्रित अनुवाद' अथवा 'शब्दशः अनुवाद' से दूर। शब्दशः अनुवाद (Literal Translation) में अनुवाद शब्दों में उलझ जाता है और वाक्य की स्पिरिट अननूदित रह जाती है। अनुवाद कृत्रिम और बोझिल हो जाता है। परन्तु 'आशु अनुवाद' में कथन की अंतरात्मा (Spirit of the Statement) भी अनूदित होनी चाहिए। मूल वक्ता की कथन–भंगिमाओं के साथ ही उसके कथ्य लक्ष्य में निरूपित चेतना का अनूदित होना भी यहाँ लाज़िमी होता है। 'आशु अनुवाद' न मात्र भावानुवाद ही है और न मात्र 'छायानुवाद'। 'आशु अनुवाद' में भावानुवाद का अंश रहता है परन्तु 'मात्र' 'कथन की आत्मा' 'Spirit of the Statement' के अर्थ में ही। वस्तुतः यह शब्दानुवाद और भावानुवाद की मध्यवर्तिनी स्थिति है जहाँ मूल वक्तृत्व में निहित भाषा–कौशल के साथ ही उसके आत्मनिष्ठ अर्थ का अंतरण अनिवार्य होता है। आशु अनुवाद स्रोत भाषा में कथित या व्यंजित भावार्थ की लक्ष्य भाषा में मौखिक अभिव्यक्ति है। यहाँ शब्दों और आर्थी संरचनाओं के अंतरण में चिंतन–मनन और चयन की गुंजाइश नहीं होती वरन् उनके त्वरित गति से तत्काल अंतरण की आवश्यकता होती है। यहाँ न कोश हैं और न पारिभाषिक शब्द संग्रह और न मशीन, जो कुछ है वह है, दुभाषिया का भाषा ज्ञान, उसकी बहुज्ञता, उसकी वाक्‌ पटुता और उसकी प्रज्ञा। आशु अनुवादक न मात्र शब्दाग्रही ही हो सकता है और न अर्थान्तरण (भावान्तरण) में घनत्व पर ही पूर्ण बल दे सकता है। उसे शब्दार्थ के अपार्थक्य को दृष्टिपथ में रखने के साथ ही श्रोताओं के मानसिक स्तर का भी ध्यान रखना होता है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के इस वाक्य "M.L. A's are advised not to make the

1. Adaptation.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

floor of the House a battlefield" के दो अनुवाद हो सकते हैं – (i) "विधायकों को सलाह दी जाती है कि विधान सभा भवन को युद्ध क्षेत्र न बनाएँ।" (ii) विधायकों से अनुरोध है कि सदन को अखाड़ा न बनाएँ।" प्रथम अनुवाद शब्दाश्रयी है जबकि द्वितीय शब्दार्थ सम्पृक्त चुटीला अनुवाद है। कहना न होगा कि दूसरा अनुवाद ही दुभाषिया का अभिप्रेत अनुवाद होगा।

कभी–कभी स्रोतभाषा में वक्ता द्वारा प्रयुक्त शब्द, पदबंध, लोकोक्ति, स्थानीय प्रयोगों सभी के लिए लक्ष्य भाषा में समानान्तर शब्द प्रायः नहीं मिलते वैसी स्थिति में दुभाषिया को उन शब्दों के अर्थ खोलकर बताना होता है। प्रायः संस्कृतिमूलक शब्दावली के साथ यह कठिनाई अधिक होती है। दुभाषिया के लिए ऐसी स्थिति में शब्दार्थ सम्पृक्त चुटीला अनुवाद एक दुष्कर कार्य बन जाता है। लक्ष्य भाषा में समानान्तर और समतुल्य शब्दों के अभाव में मात्र आवश्यक बातों का अर्थ ही खोला जाता है और भाषण के अनावश्यक अंश छोड़ने होते हैं। कुल मिलाकर आशु अनुवाद साधारण अनुवाद से अधिक कठिन कर्म है और उसकी अपनी सीमाएँ हैं।

सीमाएँ

अनुवाद एक बहुआयामी विधा है। इसके आयाम पृथ्वी से लेकर अंतरिक्ष तक परिव्याप्त हैं अर्थात् धर्म और साहित्य के अनुवाद से बात शुरू करके अब हम अंतरिक्ष विज्ञान के अनुवाद तक पहुँच गए हैं। विदेशों में ज्ञान–विज्ञान के छह सौ से ऊपर अनुशासन रेखांकित किए जा चुके हैं, जिनके अनुवाद के लिए पारिभाषिक शब्द–संग्रह अंग्रेजी में तैयार कर लिए गये हैं। अपने यहाँ धर्म और साहित्य के अलावा साहित्येतर विषयों में विधि, वाणिज्य, बैंकिंग, प्रबंध शास्त्र, विज्ञान की अन्यान्य शाखाएँ, समाज विज्ञान और मानविकी आदि के विषयों संबंधी द्विभाषिक कोश तैयार किए गए हैं और इन अन्यान्य विषयों में न्यूनाधिक अनुवाद कार्य भी हो रहा है। कहना न होगा कि इन सभी अनुशासनों के अनुवाद की अपनी–अपनी सीमाएँ हैं। अनुवादक और अनुवाद की एक सीमा रेखा है, जिसका अतिक्रमण प्रायः असंभव होता है। अतः यह मान्यता सोलह आना सही है कि किसी भी कृति का शत प्रतिशत अनुवाद हो ही नहीं सकता। अनुवाद के संबंध में ऐसी सारी नकारात्मक टिप्पणियाँ– अनुवादक प्रवंचक होते हैं। अथवा कविता अनुवाद में खो जाती है या अनुवाद एक रसहीन फल होता है अथवा अनुवाद ब्रह्मांड की सबसे कठिन क्रियाओं में से एक है आदि–आदि–अनुवाद और अनुवादक की सीमाओं की ओर ही संकेत करती हैं। वस्तुतः अनुवाद के सभी प्रकारों में आशु अनुवाद सवसे मुश्किल काम है– अतः उसकी सीमाएँ और कठिनाइयाँ भी अनुवाद के अन्य प्रकारों की तुलना में अधिक हैं।

यदि दुभाषिया किसी देश के सांस्कृतिक प्रतिनिधिमण्डल के वक्ताओं के वक्तव्यों का आशु अनुवाद कर रहा हो तो उसकी कठिनाई काफी बढ़ जाती है। सामान्यतः

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक प्रतिनिधिमंडल के सदस्यों को अपनी धर्म–संस्कृति का गम्भीर ज्ञान होता है अतः वे लोग स्रोत भाषा की संस्कृतिमूलक शब्दावली का प्रयोग अधिक करते हैं। धर्म, दर्शन, संस्कृति, रीति–रिवाजों, त्यौहारों, आचार और व्यवहार से सम्बद्ध शब्दों, पदबंधों, उक्तियों का लक्ष्य भाषा में तत्काल अनुवाद आशु अनुवादक की चुनौती होती है।

भाषा एक अर्थमूलक प्रतीक व्यवस्था है। प्रत्येक भाषा में समाज, संस्कृति, धर्म–दर्शन, मानव व्यवहार और मानव–आचरण को रेखांकित करने के लिए प्रयोजनमूलक विशिष्ट शब्दावली का प्रयोग होता है, जो प्रायः दूसरी भाषा में नहीं होती। अतः दुभाषिया के लिए लक्ष्य भाषा में समानान्तर शब्द–विधान कर पाना या नई शब्दावली गढ़ पाना आसान काम नहीं होता। ऐसी शब्दावली को न्यूनाधिक रूप से छोड़कर वक्ता के आशय को सम्प्रेषित करना उसकी विवशता होती है। यद्यपि अनुवाद की परम्परा इस बात की साक्षी है कि मनुष्य की अनुभूत्यात्मक संवेदनाएँ लगभग समान होती हैं किन्तु सामाजिक संस्कारों और भाषागत भेदों के कारण उनकी अभिव्यक्ति में अंतर आ ज़ाता है। दुभाषिया को इस अंतर से तत्काल जूझना होता है। दो भाषाओं में निहित संस्कृतियों की दूरियाँ और दुर्बोधताओं को कैसे दूर किया जाए? अलग–अलग भाषा–भाषियों के धार्मिक विश्वास, सामाजिक मान्यताएँ, रीति–रिवाज, आचार–व्यवहार, मूल्यगत अवधारणाएँ तथा परम्पराएँ भिन्न होती हैं और उनकी अभिव्यक्ति के लिए भिन्न–भिन्न भाषाओं में शब्दावली निजी और विशिष्ट होती है। इस संबंध में हिन्दी भाषा में कुछ विशिष्ट शब्द– वेदी, देवदासी, सतीत्व आदि पर विचार करें तो पाते हैं कि इन शब्दों के पीछे एक लम्बी सांस्कृतिक परम्परा विद्यमान है फिर दुभाषिया इनका अंग्रेजी में कैसे रूपांतरण करे? यह जटिल प्रश्न है। इसी तरह संस्कृति के विभिन्न घटकों–धार्मिक, सामाजिक, भौतिक आदि से सम्बद्ध शब्दावली के लिए लक्ष्य भाषा में समतुल्य अभिव्यक्तियों की खोज साधारण अनुवादक से ज़्यादा, दुभाषिया के लिए चुनौती है। हिन्दी से अंग्रेजी में आशु अनुवाद करने वाले के लिए हिन्दी शब्दों– साड़ी, पगड़ी, अंगरखा, गुलाब जामुन, बर्फी, खीर, दहीबड़ा, रोटी, जातियों के नाम (ब्राह्मण, ठाकुर, वैश्य, पासी, धानुक आदि), मकानों के नाम आदि के लिए अंग्रेजी में तत्काल शब्द दे पाना आसान काम नहीं है।

दुभाषिया की कठिनाई तब और बढ़ जाती है जब स्रोत भाषा के वक्ता का वक्तव्य अस्पष्ट हो। यह अस्पष्टता दो प्रकार की होती है– वक्ता के उच्चारण और भाषा–ज्ञान का अपर्याप्त होना तथा वक्तव्य का अस्पष्ट और सुबोध न होना। प्रायः यह देखा गया है कि राजनेता अथवा संस्कृति–साहित्य–वेत्ता सभी अच्छे वक्ता नहीं होते। व्यक्ति बड़ा विद्वान हो सकता है किन्तु उसकी अभिव्यक्ति नितांत उलझाऊ भी हो सकती है और उसका भाषा ज्ञान तथा उच्चारण और भाव–सम्प्रेषण नितांत निम्न स्तरीय हो सकता है। ज़ाहिर है कि ऐसी स्थिति में दुभाषिया की कठिनाई और बढ़ जाती है। जब मूल वक्तव्य ही स्पष्ट न

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

होगा तो उसका त्वरित भाषान्तर कैसे सम्भव होगा? वस्तुतः यह आशु अनुवाद की एक सीमा है और आशु अनुवादक के लिए एक ज़ोखिम और चुनौती भरा कार्य है। यही नहीं यदि वक्ता राजनेता होने के साथ ही साथ साहित्य वाचस्पति भी हुआ तो उसके वक्तव्य में निश्चित रूप से साहित्य के संदर्भ होंगे और दुभाषिया के लिए उन संदर्भों से परिचित न होने की स्थिति में जटिलताएँ बढ़ जाएँगी। ये सारे प्रसंग दुभाषिया की विवशता और आशु अनुवाद की सीमा रेखा सुनिश्चित करते हैं। इस संदर्भ में कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं। अंग्रेजी के एक वक्तव्य की दो पंक्तियाँ–मूल वक्तव्य से – "We politicians should care for the present. We should take lesson from the history but should never be slave of it. Take care of the present, future will always take care of you. Ramember the words–who knows the world may end to night. इन वाक्यों का दुभाषिया द्वारा कुछ इस प्रकार से किया गया तत्काल भाषान्तरण स्तरीय नहीं कहा जा सकता। यथा "हम राजनेताओं को वर्तमान की चिंता करनी चाहिए। हमें इतिहास से पाठ पढ़ना चाहिए किन्तु उसकी गुलामी नहीं करनी चाहिए। वर्तमान की चिंता करने वालों की भविष्य चिन्ता करता है। इन शब्दों को याद रखो– 'कौन जानता है कि संसार आज रात ही समाप्त हो जाए।"

ज़ाहिर है कि उक्त आशु अनुवाद स्तरीय नहीं है। कारण है अंग्रेजी–हिन्दी दुभाषिये का अंग्रेजी मुहावरों और साहित्य संदर्भों से ठीक से परिचित न होना। 'Take care of the present, future will always take care of you.' यह एक अंग्रेजी कहावत है, जिसका अर्थ है कि 'मनुष्य को वर्तमान में अपना कर्त्तव्य करना चाहिए। जो वर्तमान में कर्त्तव्य का निर्वाह करते हैं, उनका भविष्य स्वतः ठीक होता है। 'Who Knows the world may end to night. वस्तुतः यह अंग्रेजी साहित्य में विक्टोरियन काल खंड के महाकवि राबर्ट ब्राउनिंग की कविता, 'एब्ट वाग्लर' की पंक्ति है। यद्यपि कवि ने यह पंक्ति भिन्न संदर्भ (प्रेम–प्रसंग) में प्रयुक्त की है किन्तु यहाँ वक्ता ने उसका लाक्षणिक प्रयोग किया है जिसका आशय है "वर्तमान में जियो, कल का क्या भरोसा?" इस प्रकार कथित अंग्रेजी पंक्तियों का सही आशु अनुवाद इस प्रकार होगा– "राजनीतिज्ञों को वर्तमान की चिन्ता करनी चाहिए। उन्हें इतिहास की दासता नहीं, उससे सबक सीखना चाहिए। जो वर्तमान में अपना कार्य करते हैं भविष्य उनका स्वयं ध्यान रखता है। अतः "वर्तमान में जियो कल का क्या भरोसा?"

इसी तरह आधुनिक हिन्दी कवि स्व. सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय' ने अपने जर्मन प्रवास में भारतीय दूतावास में आयोजित एक स्वागत–समारोह की एक घटना का उल्लेख किया है जहाँ उनका परिचय भारतीय राजदूत द्वारा संसार प्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ 'कामसूत्र' के रचयिता महर्षि वात्स्यायन (नामगत साम्य के आधार पर) के रूप में दिया गया। वस्तुतः यह भारतीय राजदूत और संस्कृति सचिव का भारतीय इतिहास और साहित्य–संस्कृति से घोर अपरिचय और अयोग्यता का ही परिचायक था। अज्ञेय जी का जर्मन राजदूत

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

और साहित्य प्रेमियों से परिचय कराते हुए भारतीय राजदूत ने कहा– "Meet Mr. Vatsayayana. You know the 'Kamsutra' of Course."

"श्री वात्स्यायन से मिलिए। आप 'कामसूत्र' के बारे में तो जानते ही होंगे। अर्थात् 'कामसूत्र' के रचयिता श्री वात्स्यायन से मिलिए। कैसी विडम्बनापूर्ण स्थिति थी? कहाँ हिन्दी के आधुनिक कवि वात्स्यायन जी और कहाँ हजारों वर्ष पुराने ग्रंथ 'कामसूत्र' के रचयिता महर्षि वात्स्यायन।

यदि दुभाषिया को ऐसे वक्ता के कथन का आशु अनुवाद करना पड़े तो वह सिर धुन–धुन के ही पछता सकता है। वस्तुतः ऐसी स्थिति में दुभाषिया को अपनी सीमा का अतिक्रमण करना चाहिए और अज्ञान के प्रचार को रोकना चाहिए।

दुभाषिया की सीमा सर्वज्ञता का आग्रह भी है। कोई व्यक्ति सर्वज्ञ नहीं हो सकता। कोई भी भाषाविद् ज्ञान–विज्ञान, प्रौद्योगिकी, मानविकी, समाज विज्ञान, विधि–वाणिज्य आदि अन्यान्य अनुशासनों की वैज्ञानिक, तकनीकी तथा पारिभाषिक शब्दावली का जानकार नहीं हो सकता, दुभाषिया भी नहीं। किन्तु उससे आशा यही की जाती है कि मूल वक्ता के वक्तव्य में अनुस्यूत साहित्य तथा साहित्येतर संदर्भों के लिए लक्ष्य भाषा में तुरंत सटीक शब्द विधान करे, जो प्रायः असंभव होता है। अतः दुभाषिया या तो मूल से कतरा जाता है और श्रोताओं को वाग्जाल में उलझाकर तालियाँ पिटवाता है अथवा वक्तव्य के मूलाशय को ही भाषान्तरित कर देता है और विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली छोड़ देता है। वस्तुतः दूसरी स्थिति ही दुभाषिया के लिए सुरक्षित होती है।

समग्रतः यह उल्लेखनीय होगा कि दुभाषिया और द्विभाषिक की तत्काल भाषान्तर की विषय–वैविध्य के कारण अनेक सीमाएँ हैं। तत्काल भाषान्तरकार को राजनीति, कूटनीति, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों, परराष्ट्र नीति, मानवाधिकार आदि अनेक विषयों के साथ ही स्रोत भाषा के भाषा साहित्य से गहराई से परिचित होना चाहिए। परन्तु ऐसा प्रायः नहीं होता। यही नहीं ज्ञान–विज्ञान, तकनीक, प्रौद्योगिकी, विधि, वाणिज्य, अंतर्राष्ट्रीय व्यापार, पत्रकारिता आदि के अधुनातन विकास का ऐतिहासिक ज्ञान तथा इन अन्यान्य विषयों से सम्बद्ध पारिभाषिक और तकनीकी शब्दावली का विस्तृत, विशद और प्रामाणिक ज्ञान न हो पाना भी उसकी सीमाएँ हैं। विस्तार और सीमा का अंतर्द्वन्द्व आशु अनुवाद की महती विशेषता है।

दुभाषिया अथवा आशु भाषान्तरकार की योग्यताएँ

आशु भाषान्तरकार की सर्वप्रथम योग्यता वक्ता के वक्तव्य को तुरंत समझने की है। इसके लिए उसे भिन्न–भिन्न प्रकार के वक्ताओं (एक ही भाषा के वक्ताओं) को सुनकर, एक ही भाषा के विविध उच्चारणों को समझने का अभ्यास करना होता है। हिन्दी ही को लें तो भोजपुरी क्षेत्र के वक्ताओं तथा मालवा और राजस्थान, ब्रज और अवधी क्षेत्र के वक्ताओं

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

द्वारा एक ही बात को कहने के तरीके में भिन्नता होगी। भाषा–प्रयोग में स्थानीय स्पर्श बना रहेगा। फिर, कुछ वक्ता बहुत स्पष्ट बोलते हैं और कुछ अस्पष्ट। दुभाषिया को दोनों तरह के वक्ताओं के वक्तव्य को समझने में सिद्धहस्त होना चाहिए। इसके लिए स्रोत और लक्ष्य भाषा का गंभीर ज्ञान अपेक्षित है और भाषागत स्थानीय प्रयोगों (स्लैंग्स) की जानकारी भी नितान्त जरूरी है। भाषण की व्यापक समझ के लिए आशु भाषान्तरकार को भाषण को ध्यान से सुनना, समझना और पूर्वानुमान के आधार पर भाषण के अग्र अंश की संकल्पना कर लेना और लक्ष्य भाषा में भाषान्तर की पेशबन्दी कर लेनी चाहिए। वस्तुतः ये तीनों क्रियाएँ मन में एक साथ स्वचालित ढंग से होनी चाहिए। इस क्षमता का विकास ही दुभाषिया की सफलता का केन्द्र–बिन्दु होता है। उसे 'हैड फोन' की सुविधा यदि मिली हुई है तो यह काम आसान हो जाता है। अन्यथा स्थिति में माइक से हटकर बोली हुई बातों का पूर्वानुमान ही करना होता है। वक्तव्य की सम्पूर्ण जानकारी के लिए आशु भाषान्तरकार को तीन चरणों से गुजरना होता है– (i) भाषण के विषय का पूर्ण ज्ञान (ii) वक्ता की मुद्राओं, आंगिक चेष्टाओं और भाव–भंगिमाओं से भाषण को समझना अथवा अनुमान करना (iii) भाषण को मनोयोग से सुनकर समझना। कहना न होगा कि उक्त क्रियाएँ अन्योन्याश्रित हैं।

दुभाषिया को विषय–ज्ञान (भाषण) सुस्पष्ट होना चाहिए। भाषण का विषय, राजनीति, कूटनीति, धर्म–दर्शन, साहित्य, विज्ञान, वाणिज्य–व्यापार, कुछ भी हो सकता है। विषय–ज्ञान होने पर वक्ता की बात को वह तुरंत समझ सकेगा और लक्ष्य भाषा में उसका अनुवाद उसके मन में कौंध जाएगा। यही नहीं उसके भाषान्तर में सहजता और सुसम्बद्धता भी बनी रहेगी।

वक्ता की आंगिक चेष्टाओं, भाव–भंगिमाओं आदि अर्थात् भाषण–कला के सम्पूर्ण नाटकीय व्यापार से दुभाषिया को पूरी तरह परिचित होना चाहिए। वक्तृत्व एक कला है, एक नाटकीय व्यापार है, जिसमें शब्द–शक्तियों के अन्यान्य पहलुओं–सेन्स, फीलिंग, टोन और इन्टेंशन से अर्थ द्योतित होता है। यही नहीं वाचिक के साथ ही कायिक और सात्विक चेष्टाओं, मुख–मुद्राओं, भंगिमाओं, बलाघात आदि क्रियाओं से वक्ता अपना अभीष्ट अर्थ सम्प्रेषित करता है। उसके अभीष्ट अर्थ को लक्ष्य भाषा में रूपांतरित करने के लिए दुभाषिया को उसी तरह की कायिक चेष्टाएँ करनी चाहिए। मूल वक्ता भाषण के दौरान हँसता है तो दुभाषिया को भी ठहाका लगाना चाहिए। वह यदि हाथ उठाता है, मुट्ठी बाँधता है तो दुभाषिग्रा को भी वही सब करना चाहिए। कुल मिलाकर दुभाषिया को नाटकीय व्यापार (वक्ता का अनुकरण) का बराबर सहारा लेना चाहिए। यही नहीं दुभाषिया को मुख–मुद्राओं, कायिक चेष्टाओं के आधार पर वक्ता के मूल मंतव्य को भाँप लेना चाहिए। आगे क्या कहा जाएगा, इसका पूर्वानुमान करके और मन में ही अनुवाद करने की प्रवृत्ति का विकास करना चाहिए। वस्तुतः आंगिक चेष्टाओं, मुख–मुद्राओं से भाषण के अग्रभाग का पूर्वानुमान ही आशु अनुवादक का सम्बल होता है, क्योंकि पूरी बात सुनकर, फिर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सोच–समझकर उसका भाषान्तर करने का अवकाश दुभाषिया के पास नहीं होता। भाषान्तर का बहुलांश, वक्ता की आंगिक चेष्टाओं के पूर्वानुमानाश्रित होता है।

भाषा–ज्ञान भाषान्तरकार की मूलभूत योग्यता और महती आवश्यकता है। दुभाषिया को स्रोत और लक्ष्य भाषाओं का असाधारण ज्ञान होना चाहिए। उसे भाषा की बारीकियों, स्थानीय भाषा प्रयोगों, दोनों भाषाओं (स्रोत और लक्ष्य भाषा) की लोकोक्तियों, मुहावरों, कहावतों, शब्दावली और पर्यायों, विशिष्ट भाषा–प्रयोगों, व्याकरणिक संरचनाओं और स्रोत और लक्ष्य भाषा के साहित्य का गंभीर–ज्ञान होना चाहिए। प्रायः वक्ता एक ही बात को कई बार कह जाते हैं। आशु भाषान्तरकार को तब एक ही शब्द के कई पर्यायों का प्रयोग करना चाहिए ताकि श्रोता ऊबे नहीं और दुभाषिया कर्म रोचक बना रहे। यदि वक्ता की भाषा मुहावरेदार अथवा अलंकृत है तो उसका भाषान्तर भी उसी तरह किया जाना चाहिए।

कभी–कभी वक्ता स्रोत भाषा के साथ ही कुछ अन्य भाषाओं की शब्दावली का प्रयोग भी कर देता है, जैसे अंग्रेजी का वक्ता लैटिन और ग्रीक शब्दों का प्रयोग करे। अरस्तू की त्रासदी पर अंग्रेजी में व्याख्यान करते समय अक्सर ग्रीक शब्दों– कैथार्सिस, हैमर्सिया, मिमीसिस–आदि का प्रयोग कर दिया जाता है। इसी तरह हिन्दी का वक्ता संस्कृत श्लोकों का प्रयोग कर देता है। ऐसी स्थिति में दुभाषिया को घबराना नहीं चाहिए वरन् प्रसंग और संदर्भ के आधार पर दूसरी भाषा की शब्दावली का अनुमानतः भावानुवाद कर देना चाहिए।

आशु भाषान्तरकार को स्रोत और लक्ष्य भाषाओं में विविध शब्दों के सही उच्चारण और गलत उच्चारण की भी जानकारी होनी चाहिए ताकि वक्ता के गलत उच्चारण को सुनकर भी वह मूल शब्द को पकड़ सके तथा सही भाषान्तर कर सके। वस्तुतः शब्दों के उच्चारण में प्रदेश और स्थानीयता का स्पर्श हमेशा बना रहता है। भोजपुरी और बिहारी क्षेत्र का हिन्दी–विद्वान 'स्थान' को हमेशा 'अस्थान' ही उच्चारित करेगा और राजस्थान, मालवा प्रदेश के लोग 'मेरे कों' 'तेरे कों' 'अपन कों' आदि शब्दों का प्रयोग करेंगे। भाषान्तरकार को इस उच्चारण वैविध्य से परिचित होना चाहिए।

वस्तुतः आशु भाषान्तरकार को वक्ता की खराब आवाज़, अजीबोग़रीब उच्चारण, गलंत भाषिक संरचनाओं, दुरूह अथवा अस्पष्ट या अल्प स्पष्ट अभिव्यक्तियों, माहौल की गहमागहमी, शोर–शराबा, यंत्रों (माइकादि) की गड़बड़ी आदि अन्यान्य व्याधियों को झेलना पड़ता है। किन्तु इन सबसे विचलित हुए बिना उसे वक्ता के एकाध वाक्यांश को पकड़कर अपना भाषान्तर जारी रखना चाहिए। वक्ता के मूल विषय और मूलाभिव्यक्ति को केन्द्र में रखकर उसे कभी–कभी अपनी बात अनुमान के सहारे भी करनी पड़ सकती है। यह उसकी विवशता भी है और योग्यता भी। परन्तु उसे अपनी ओर से कोई निश्चित मत नहीं देना चाहिए। वक्ता के सारांश के इर्द–गिर्द ही घूमना चाहिए।

दुभाषिया को मूल वक्ता के भाव–बोध को निरंतर संचालक बनाना चाहिए। भाषण सुनने और अंतरण के बीच का अंतराल अत्यल्प होता है। अतः वक्ता की अभिप्रेत विचारधारा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

/ भावधारा को आत्मसात करके यथासंभव समुचित शब्दों में अभिव्यक्त करने की प्रक्रिया स्वचालित ढंग से भाषान्तरकार के मस्तिष्क में होती है किन्तु कभी-कभी वक्ता की कठिन शब्दावली उसे बाधित करती है। ऐसी स्थिति में दुभाषिया को शब्दों पर विशेष बल न देकर मस्तिष्क की स्वचालित प्रक्रिया को तिरोहित नहीं होने देना चाहिए अन्यथा वह या तो भाषान्तर में पिछड़ जाएगा अथवा सही अनुवाद नहीं कर पायेगा।

वैज्ञानिक, तकनीकी और पारिभाषिक शब्दावली, मुहावरेदार, लच्छेदार भाषा अथवा संख्या आधारित (डाटा बेस्ड) व्याख्यानों के भाषान्तरण में दुभाषिया के भाषा ज्ञान और तत्परता की परीक्षा होती है। दोनों भाषाओं (स्रोत और लक्ष्य) की वृहत् पारिभाषिक शब्दावली का परिज्ञान ही उसका पथ-प्रदर्शक होता है।

भाषाओं (स्रोत + लक्ष्य) के व्याकरण, शाब्दी और आर्थी संरचनाओं की सही जानकारी दुभाषिया से अपेक्षित होती है अन्यथा वह मुहावरेदार, लच्छेदार भाषण का सही अनुवाद न कर सकेगा। वस्तुतः दुभाषिया को वक्ता के बोलते ही पहले वाक्य से ही अनुवाद करना होता है अतः उसे वक्ता के व्याख्यान के विषय के संबंध में पूर्व जानकारी रखनी चाहिए। अन्यथा स्थिति में उसका अनुवाद मात्र शब्दानुवाद बनकर रह जाएगा।

भाषान्तरकार की अभिव्यक्ति-पद्धति और भाव-सम्प्रेषण का तरीका अत्यंत रोचक और मूल वक्ता की अभिव्यक्तिगत भंगिमाओं के अनुरूप होना चाहिए। कुछ वक्ता छोटी बात को भी भाषा की तर्कणा शक्ति, रस-ध्वनि आदि के सहारे अत्यंत प्रभावशाली ढंग से पेश करते हैं। स्पष्ट है कि यहाँ भाषान्तरकार को एक अनुकारक की भाँति लक्ष्य भाषा में उसी तरह भावाभिव्यक्ति करनी चाहिए ताकि श्रोता ऊबें नहीं।

आशु भाषान्तरकार में 'माइक फोबिया' नहीं होनी चाहिये। कुछ लोग भीड़ देखकर माइक के सामने विचलित हो जाते हैं उनका कण्ठ अवरुद्ध और स्वर भंग हो जाता है। दुभाषिया को आत्मविश्वास से काम लेना चाहिए। तनावमुक्त होकर अपनी स्वाभाविक लय, गति, स्वरों के आरोह-अवरोह का ध्यान रखना चाहिए। निजी अन्तर्द्वन्द्व, तनाव, सैद्धान्तिक मतभेद आदि बातों को दुभाषिया को छोड़ना होता है अन्यथा उसका दुभाषिया कर्म प्रभावित हो जाएगा।

दुभाषिया को भाषान्तरण के दौरान लक्ष्य भाषा की सहजता और स्वाभाविक प्रवाह की रक्षा करनी चाहिए। श्रोताओं को शब्दार्थगत साम्य और सहज अर्थबोध की अनुभूति होनी चाहिए। कुल मिलाकर भाषान्तर जीवन्त और सुबोध होना चाहिए तथा भाषा और शब्द-प्रयोग प्रांजल। द्विअर्थी बोधक और विवादास्पद शब्दों के प्रयोग से वचना चाहिए।

वक्ता और भाषान्तकार की गति मति-लहज़ा, गुणवत्ता आदि में साम्य होना चाहिए। दुभाषिया का उच्चारण साफ तथा भाषान्तर प्रवाहयुक्त होना चाहिए। भाषान्तरकार को एक प्रकार से वक्ता का अनुकारक होना चाहिए और उसे विषय-वस्तु, विचारधारा-भावधारा को ठीक वक्ता के अंदाज़ में ही पेश करना चाहिए। वस्तुतः भाषान्तरकार की

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

स्थिति सृजनधर्मी अनुवादक की नहीं हो सकती और न ही वह मौलिकता का आग्रही हो सकता है, वह मात्र शब्दार्थ–अनुकारक ही हो सकता है। अक्सर मूल वक्ता विषय से भटकते हैं। बेसिर पैर की बातें करते हैं, टूटे–फूटे, अधूरे और दोषयुक्त वाक्यों का प्रयोग करते हैं। सभा–सम्मेलनों में अनर्गल प्रलाप करते हैं। दुभाषिया को निर्लिप्त और तटस्थ भाव से यह सब झेलना होता है और निष्काम कर्मयोगी की भूमिका का निर्वाह करना होता है। उक्त सभी कठिनाइयों के बावजूद भी आशु अनुवाद का महत्त्व असंदिग्ध है। आशु अनुवाद का सर्वाधिक महत्त्व, भारतीय संसद और अन्य देशों की पार्लियामेन्टों में होता है जहाँ बहुभाषा–भाषी सदस्य अपनी–अपनी क्षेत्रीय भाषाओं में बात करते हैं। भारतीय संसद में भाषान्तरित भाषा से पुनः भाषान्तरण की व्यवस्था है, यथा–भारतीय भाषाओं से अंग्रेजी और अंग्रेजी से हिन्दी में भाषान्तरण की व्यवस्था। आज मशीनी उपकरणों का प्रयोग आशु अनुवाद के क्षेत्र में भी हो रहा है किन्तु ये सारी सुविधाएँ और मशीनी प्रयोगों के बावजूद भी आशु अनुवाद शतप्रतिशत कभी नहीं होता। आशु अनुवाद का प्रतिशत दुभाषिया की योग्यता सापेक्ष होता है।

समग्रतः दुभाषिया को स्रोत और लक्ष्य भाषाओं के अतिरिक्त अन्य भाषा साहित्यों का परिज्ञान होना चाहिए। वह बहुज्ञ और व्याकरण– भाषाशास्त्र का जानकार भी होना चाहिए। व्यतिरेकी भाषा विज्ञान से उसे बड़ी सहायता मिलती है। संसार भर के देशों, प्रमुख शहरों, राजनेताओं तथा अन्य प्रमुख व्यक्तियों, घटनाओं से परिचित होना दुभाषिया के लिए आवश्यक है अन्यथा वह विदेशी व्यक्तियों, स्थानों आदि नामवाची संज्ञाओं का सही उच्चारण भी न कर पायेगा। उसकी बहुज्ञता के क्षेत्र हैं विश्व के प्रमुख धर्म–दर्शन, वाणिज्य व्यापार, बैंकिंग, यू.एन.ओ., विश्व बैंक, यूनेस्को, खेल–कूद, परराष्ट्रनीति, देश–विदेशों के प्रमुख कांड, विश्व भर की राजनीतिक–कूटनीतिक गतिविधियों की प्रामाणिक जानकारी। दुभाषिया की योग्यताएँ अनेक हो सकती हैं। उसे प्रत्युत्पन्नमति युक्त अच्छे व्यक्तित्व का धनी होना चाहिए।

अनुवाद के सिद्धान्त और आशु अनुवाद

भाषान्तरण सामान्यतः अनुवाद है और आशु भाषान्तरण दुभाषिया–कर्म है। किन्तु सही अर्थों में अनुवाद वहीं से शुरू होता है, जहाँ से भाषान्तरण समाप्त होता है अर्थात् भाषान्तरकार का ध्यान जहाँ भाषायी यूनिटों के अनुवाद की ओर अधिक रहता है वहीं अनुवाद में आर्थी संरचनाओं की ओर ध्यान अधिक दिया जाता है। यद्यपि अनुवाद के सर्वसम्मत सिद्धान्त नहीं बनाए जा सकते किन्तु विद्वानों की अनुवाद संबंधी टिप्पणियों तथा अनूदित ग्रंथों की पुष्पिकाओं, प्राक्कथनों आदि के आधार पर अनुवाद–सिद्धान्तों को रेखांकित किया जा सकता है। यहाँ देखना यह है कि अनुवाद के सिद्धान्त आशु–अनुवाद पर कहाँ तक अतंर्घटित होते हैं और आशु अनुवाद के क्या सिद्धान्त हो सकते हैं? आशु अनुवाद के

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सिद्धान्तों को सुरूपायित करने के लिए अनुवाद के सिद्धान्तों के आलोक में ही विचार करना होगा। अतः अनुवाद के कतिपय सिद्धान्तों की पृष्ठभूमि में आशु अनुवाद के सिद्धान्त यहाँ विचारणीय हैं–

(1) अर्थ सम्प्रेषण और अर्थ संकोच का सिद्धान्त :– वस्तुतः आधुनिक और समसामयिक संदर्भों में अनुवाद से तात्पर्य है कि अभीष्ट अर्थ की रक्षा करते हुए स्रोत भाषा से लक्ष्य भाषा में अंतरण करना। अंग्रेजी के प्रसिद्ध समीक्षक, साहित्यकार और अनुवादक डॉ. जॉन्सन के अनुसार "दुर्लभ सर्जनात्मक साहित्य के अनुवाद में अर्थ सम्प्रेषण शत–प्रतिशत कभी नहीं होता।" पीटर न्यू मार्क के अनुसार– "अनुवाद में कभी अर्थ का विस्तार हो जाता है और कभी संकोच।" ए.एच. स्मिथ ने भी अपने ग्रंथ "आस्पेक्ट्स ऑव ट्रांसलेशन" में अनुवाद में शतप्रतिशत अर्थ सम्प्रेषण न हो पाने की सीमा को स्वीकारा है। लिओनार्ड फारेस्टर की मान्यता है कि "अनुवाद स्रोत भाषा की प्रतीक व्यवस्था का लक्ष्य भाषा में अंतरण है।" इस दृष्टि से भी अनुवाद में शतप्रतिशत अर्थान्तरण नहीं हो सकता क्योंकि एक भाषा की प्रतीक व्यवस्था के लिए दूसरी भाषा में समतुल्य प्रतीक योजना दे पाना असंभव जैसा ही है। विद्वानों की इन मान्यताओं से यह सुस्पष्ट है कि अनुवाद का यह एक ठोस लक्ष्य और सिद्धान्त है कि लक्ष्य भाषा में स्रोत भाषा के अभीष्टार्थ का सम्प्रेषण होना चाहिए। परन्तु सामान्यतः या तो अर्थ विस्तार हो जाता है या अर्थ संकोच। फिर भी यह सिद्धान्त स्वीकार्य होना चाहिए कि स्रोत भाषा के अभीष्टार्थ का लक्ष्य भाषा में सम्प्रेषण का यथासंभव उपक्रम अनुवाद का एक सिद्धान्त है।

आशु अनुवाद की दृष्टि से अर्थ सम्प्रेषण ही दुभाषिया का कार्य होता है। वक्ता के भाषागत भटकाव अथवा अनर्गल और गलत प्रयोगों का दुभाषिया द्वारा किये गये भाषान्तरण का लक्ष्य नहीं होता। उसका केन्द्रवर्ती बिन्दु होता है वक्ता के अभीष्टार्थ की लक्ष्य भाषा में प्रबलतम अभिव्यक्ति। इस प्रकार 'अर्थ सम्प्रेषण' का सिद्धान्त सामान्य अनुवाद पर भले ही उतना लागू न हो किन्तु आशु–अनुवाद का वह प्रमुख सिद्धान्त है। अर्थ सम्प्रेषण की यह क्रिया–प्रक्रिया आशु अनुवाद की कसौटी भी है।

(ii) व्याख्या सिद्धान्तः– अनुवाद को टीका, भाष्य, टिप्पणी और व्याख्या मानने वालों की भी लम्बी परम्परा है। संस्कृत में टीका और भाष्य परम्परा, अंग्रेजी में 'एनोटेटिव ट्रांसलेशन'[1], की परम्परा काफी प्राचीन है। यही नहीं पश्चिम में आधुनिक काल में भी इस सिद्धान्त के सम्पोषकों की लम्बी श्रृंखला है इनमें नीडा, रोज़ेटी, रोमन जैकवसन, जेम्स होम्स, रूसी लेखिका ई.एम. मेदनिकोवा आदि उल्लेखनीय हैं। ये लोग अनुवाद के व्याख्या–सिद्धान्त को तरजीह देते हैं। रोजेटी ने लिखा है, "A translation is perhaps the most direct form of Commentry" अर्थात् अनुवाद, कदाचित् 'कमेन्ट्री' का सबसे सशक्त तरीका है। रोमन जैकवसन ने लिखा है– "अनुवाद एक भाषा के शाब्दिक प्रतीकों की अन्य भाषा के शाब्दिक प्रतीकों द्वारा व्याख्या है।" मेदनिकोवा के शब्दों में

1. Annotative Translation

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

"अनुवाद एक प्रकार से टीका–टिप्पणी ही है।" इस तरह अनेक विद्वान अनुवाद के व्याख्या–तत्त्व पर विशेष बल देते हैं। वस्तुतः अनुवाद का जो अंश अनूदित नहीं हो पाता, उसकी व्याख्या करनी होती है जैसे कि विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली, मुहावरे, कहावतें, लोकोक्तियाँ, संस्कृतिमूलक शब्दावली आदि। यदि आशु अनुवाद के संदर्भ में देखें तो व्याख्या वहाँ भी उपादेय होती है। ऐसे अनेक प्रसंग दुभाषिया के सामने आते हैं जब उसे वक्तव्य के कुछेक अंश श्रोताओं तक व्याख्या करके अभिव्यक्त करने होते हैं। इस दृष्टि से आशु अनुवाद में अनुवाद के व्याख्या सिद्धान्त[1] से पर्याप्त सहायता मिलती है। वस्तुतः अनुवाद का व्याख्या सिद्धान्त आशु अनुवाद अथवा दुभाषिया कर्म में बहुत उपादेय है। अतः आशु अनुवाद के संदर्भ में व्याख्या–सिद्धान्त एक महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त है।

(iii) समतुल्यता–सिद्धान्त :– स्रोत से लक्ष्यभाषा में प्रस्तुत किया जाने वाला अनुवाद भाषा, भाव (अर्थ), आकार और मूल्य में समतुल्य (Equal in value, amount and worth) होना चाहिए। नीडा ने भी अनुवाद के संबंध में निकटतम, सहज एवं समतुल्य अभिव्यक्ति (Closest natural equivalent) की बात कही है। अनुवाद के समतुल्यता सिद्धान्त के संबंध में वे लिखते हैं कि अनुवाद स्रोत भाषा के संदेश को लक्ष्य भाषा में अर्थ और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से निकटतम सहज रूप से अभिव्यक्ति है[2] किन्तु वे यह भी मानते हैं कि अनुवाद मूल के अत्यधिक निकट हो सकता है किन्तु मूल की सभी विस्तृत बारीकियाँ उसमें नहीं आ सकतीं।[3]

जार्ज सेन्ट्सबरी नेभीएलिज़ाबेथन–युग तक के अंग्रेजी में हुए अनुवादों पर विचार करते हुए लिखा है कि अनुवाद मूल का साहित्यिक समतुल्य होता है।[4] अर्थात् अनुवाद का यही सिद्धान्त है कि उसमें मूल से यथासम्भव समतुल्यता का निर्वाह किया जाए, किन्तु ऐसा हमेशा सम्भव नहीं।

अनुवाद के समतुल्यता सिद्धान्त के संबंध में प्रसिद्ध भाषा–वैज्ञानिक जे.सी. कैटफोर्ड की मान्यता है कि "अनुवाद स्रोत–भाषा की पाठ्य सामग्री का लक्ष्यभाषा की समतुल्य पाठ्य सामग्री द्वारा प्रतिस्थापन है।"[5] 'लिंग्वस्टिक थ्योरी ऑव ट्रान्सलेशन' नामक ग्रंथ में कैटफोर्ड ने अनुवाद के समतुल्यता सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए स्वनिम आदि

---

1. फारसी कवि उमर खय्याम की रुबाइयों का एडबर्ड फिजराल्ड द्वारा किये गये अंग्रेजी अनुवाद में इस सिद्धान्त का अनायास ही अनुप्रयोग हुआ है।
2. Translation consists in producing in the receptor language the closest natural equivalent to the message of the source language, first in meaning and second in style."
Language Structure and Translation
3. ".......There can be no absolute correspondence between two languages. The total impact of a translation may be reasonably close to the original, but there can be no identity of detial. **Towards a science of translation.**
4. "A literary equivalent of the original.
5. "...the replacement of textual material in one language by equivalent textual material in another language." **Linguistic theory of Translation.**

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषा के अन्यान्य सूक्ष्म घटकों और शब्द के अन्यान्य सूक्ष्म स्तरों तक स्रोत भापा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद के समतुल्य प्रतिस्थापन संबंधी सिद्धान्त की विशद व्याख्या की है।

नीडा ने भी समतुल्यता सिद्धान्त की व्याख्या करते हुए निम्नलिखित वातों में समतुल्यता स्वीकारी है–

(अ) भाषाओं की सहज समीपता :– एक ही परिवार की, एक ही देश और एक जैसे समाज की भाषाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषायी समीपता होती है। अतः अनुवादक अथवा आशुअनुवादक को मात्र शब्दों के अर्थ पर ही ध्यान केन्द्रित करना होता है। इस दृष्टि से हिन्दी, मराठी, गुजराती अथवा ग्रीक और लैटिन में पर्याप्त साम्य और समतुल्यता है।

(ब) विषयवस्तु, स्वरूप एवं शैली :– विषय वैविध्य–धर्म, राजनीति, साहित्य, विज्ञान, विधि, दर्शन आदि में कथ्यगत विभिन्नता होती है यही नहीं इनमें शिल्पगत विविधता भी पाई जाती है। अतः आशु अनुवादक अथवा अनुवादक यहाँ कोई सुनिश्चित मानदण्ड अपनाकर नहीं चल सकता। उसे कथ्य और शिल्प में उचित तालमेल करना होता है। वस्तुतः दुभाषिया के लिए न मात्र अर्थगत सम्प्रेषण भार उचित है और न कोरा वाग्जाल। उसे अपनी प्रतिभा और कौशल का प्रदर्शन भाषा–शिल्प के स्तर पर ही समतुल्य शब्दों, पदबंधों, सूक्तियों, मुहावरों के तत्काल चयन और खोज में करना चाहिए। इसके लिए उसे रंचनात्मक कौशल और कल्पना का सहारा लेना होता है। उसे चाहिए कि स्रोत भाषा की उक्त सामग्री के लिए लक्ष्य भाषा में समतुल्य अभिव्यक्तियों को कंठस्थ कर ले। उदाहरण के लिए अंग्रेजी प्रयोग 'They took to their heels' के लिए उसे हिन्दी में कई वैकल्पिक प्रयोग – वे भाग गए, वे नदारद हो गए, वे रफूचक्कर हो गए, वे नौ दो ग्यारह हो गए आदि रट लेने चाहिए और वक्ता के पूर्व प्रसंग और शैलीगत औदार्य के अनुरूप किसी एक समतुल्य पदबन्ध का प्रयोग करना चाहिए।

नीडा ने समतुल्यता के दो प्रकारों का उल्लेख किया है– (1) औपचारिक समतुल्यता (formal equivalence) और (2) गतिशील समतुल्यता (Dynamic Equivalence)। औपचारिक समतुल्यता में शब्दों, पदबंधों, वाक्यों, मुहावरों आदि का यथावत् अक्षरशः अनुवाद किया जाता है। स्पष्ट है कि आशु अनुवाद में औपचारिक समतुल्यता उसके प्रवाह और सौन्दर्य को नष्ट कर देगी। आशु अनुवाद में गतिशील समतुल्यता का निर्वाह होता है जहाँ दुभाषिया वक्ता के अभिप्राय को समझ कर लक्ष्य भाषा के श्रोताओं के सामने उसे खूबसूरती के साथ अभिव्यक्त करता है। उसका ध्यान वहाँ स्रोत भाषा की भाषाई यूनिटों पर न होकर लक्ष्य भाषा की भाषाई यूनिटों पर होता है। उसे यह नहीं देखना कि "किस प्रकार कहा गया है?" वरन् उसे देखना होता है कि "किस प्रकार कहा जाए?" ताकि श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाएँ। इस बात को बाइबिल के न्यू टेस्टामेन्ट के वाक्यांश से स्पष्ट किया जा सकता है। "Greet one another with a holy Kiss." औपचारिक समतुल्यता का निर्वाह

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

करते हुए अनुवाद होगा– "पवित्र चुम्बन से एक दूसरे का स्वागत किया।" किन्तु यहाँ 'Holy Kiss' एक पुरानी परम्परा को रेखांकित करने वाला शब्द है जब अभिवादन का यही तरीका प्रचलित था। गतिशील समतुल्यता का निर्वाह करते हुए आज अनुवाद होगा "एक दूसरे से गले मिलकर अभिवादन किया।" वस्तुतः 'गतिशील समतुल्यता' में 'समतुल्य प्रभाव के सिद्धान्त'[1] का निर्वाह होता है इस सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हुए नीडा ने लिखा है कि "गतिशील अनुवाद ही स्रोत भाषा के संदेश के निकटतम सहज समतुल्य होता है।" सहज शब्द का आशय स्पष्ट करते हुए नीडा ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि सहज रूप और अर्थ दोनों दृष्टियों से भाषा की प्रकृति और संस्कृति के अनुरूप होता है।[2] गतिशील अनुवाद पढ़कर/सुनकर पाठक/श्रोताओं को पता ही नहीं लगता कि वह किस भाषा से किया गया भाषान्तरण है।

अनुवाद के इस सिद्धान्त को यदि आशु अनुवाद के संबंध में अंतर्घटित किया जाए तो यह एक ऐसा आदर्श सिद्धान्त है, जिसे आकार देने का निरंतर प्रयास दुभाषिया को करना चाहिए। यद्यपि दुभाषिया भाषा के उन सूक्ष्म स्तरों के भाषान्तरण की बात नहीं सोच सकता, जिसकी चर्चा नीडा अथवा कैटफोर्ड ने की है। उसका उद्देश्य स्रोत भाषा की शाब्दी और आर्थी संरचनाओं के लिए लक्ष्य भाषा में निकटतम सहज समतुल्य अभिव्यक्तियाँ देना भर हो सकता है।

(iv) सांस्कृतिक संदर्भों के एकीकरण का सिद्धान्तः– कुछ विद्वान अनुवाद में भाषागत (स्रोत एवं लक्ष्य भाषाएँ) प्रतीकों के एकीकरण और विशेष रूप से सांस्कृतिक शब्दावली (शब्द प्रतीकों) के प्रतिस्थापन और एकीकरण की बात करते हैं। इसी संदर्भ में अनुवाद को सांस्कृतिक सेतु कहा गया है अर्थात् दो अलग–अलग भाषायी समाजों की संस्कृतियों की अपरिचय रूपी जलधारा पर परिचय रूपी सेतु।

रूसी समाजशास्त्रियों, विशेषरूप से मैलिनोवस्की ने अनुवाद के संदर्भ में दो भिन्न भाषायी समाजों के मध्य सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भों के एकीकरण की बात उठाई है। प्रत्येक भाषा का सामाजिक परिवेश और सांस्कृतिकमूलक शब्दावली दूसरी भाषा से भिन्न होती है। वस्तुतः यह भाषायी शब्द–प्रतीक–व्यवस्था ही है, जो अलग–अलग भाषायी समाजों में संस्कृति सम्बन्धी (धर्म, दर्शन, मूल्य, मान्यताएँ, प्रेम–विवाह, रहन–सहन, खान–पान तथा आचरण संबंधी दृष्टिकोण) वैभिन्न्य को रेखांकित करती है। अनुवाद में दो भाषायी प्रतीक व्यवस्थाओं (स्रोत और लक्ष्य भाषाएँ) में समतुल्य शाब्दी और आर्थी संरचनाओं द्वारा एकीकरण का प्रयास किया जाता है। आशु अनुवाद में सांस्कृतिक सम्मिलन और एकीकरण का अवकाश अधिक रहता है क्योंकि दुभाषिया जिस वक्ता के वक्तव्य का आशु अनुवाद

1. "The Closest natural equivalent to the source language message,"
Language Structure and Translation.

2. "By 'Natural 'we mean that the equivalent forms shall not be 'foreign 'either in form (except of course such inevitable matters as proper names) or meaning. That is to say that a good translation should not reveal its non–native source. " Nida

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रस्तुत करता है वह अपनी भाषा और संस्कृति का जीवन्त प्रतीक होता है और इस तरह श्रोताओं को अपनी संस्कृति के प्रति आकृष्ट करता है। यह प्रक्रिया प्रतिक्रमात–दृष्टि (vice–versa) से भी चलती है। कुल मिलाकर आशु अनुवाद में दो भाषायी संस्कृतियों के एकीकरण का अवकाश अधिक होता है इसलिए यह सिद्धान्त आशु अनुवाद के प्रमुख सिद्धान्तों में परीक्षणनीय है।

(v) पुनर्कोडीकरण का सिद्धान्तः– पिछले वर्षों अमरीकी भाषाविद् विलियम फ्रॉले ने पुनर्कोडीकरण के सिद्धान्त[1] की चर्चा की है। वस्तुतः अनुवाद के दौरान 'मैट्रिक्स कोड' 'टारगेट कोड' और 'सबकोड' की जिस जटिल प्रक्रिया की वे चर्चा करते हैं, वह आशु अनुवाद पर कतई अंतर्घटित नहीं हो सकती क्योंकि दुभाषिया प्रविधि में दुभाषिया के पास इतना मगज़पच्ची करने का अवकाश नहीं होता। यहाँ तो स्वचालित मशीन की भाँति ही वक्ता के साथ ही आशु अनुवादक को आशु अनुवाद प्रस्तुत करना होता है। अनुवाद के ये वर्णित सिद्धान्त आशु अनुवाद पर लागू तो होते हैं और उनसे दुभाषिया लाभ भी उठा सकता है किन्तु फिर भी शब्दार्थ का त्वरित भाषान्तरण एक प्रकार से परकाया प्रवेश जैसी विद्या है, जिसमें अभ्यास से ही पारंगत हुआ जा सकता है।

आशु अनुवाद की प्रक्रियाः– अनुवाद–प्रक्रिया के प्रायः तीन चरण बताए जाते हैं– विश्लेषण, अंतरण और पुनर्गठन परन्तु दुभाषिया को इतना अवकाश कहाँ कि वह इन तीनों चरणों से विधिवत् गुज़रे। ये चरण उसके मस्तिष्क में तत्काल स्वरूप ग्रहण कर लेते हैं और उसे अंतरण करना होता है। सिद्धहस्त और अनुभवी दुभाषिये के मन में विश्लेषण तुरंत कौंधता है और वह त्वरित गति से भाषान्तर प्रस्तुत कर देता है।

(अ) विश्लेषण : वस्तुतः विश्लेषण अर्थगत (विषयगत) और भाषागत होता है। दुभाषिया के लिए यह आवश्यक है कि वह वक्ता के विषय का ज्ञाता हो और भाषण के अर्थ को तुरंत पकड़ सके। यह मानसिक तैयारी दुभाषिया से अपेक्षित है। अर्थ को सही ढंग से न पकड़ पाने के कारण दुभाषियों से भयंकर भूलें हुई हैं और हो सकती हैं। इस संबंध में कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं– "This rule is responsible for their deterioration. गलत अनुवाद किया गया– 'इस नियम के अधीन उनका पतन हुआ।' जबकि होना चाहिए– "यह शासन उनके पतन के लिए उत्तरदायी है।"

(ii) 'All developing countries are against imperialism and foreign occupation', – 'सभी विकासशील देश साम्राज्यवाद और विदेशी व्यवसाय के विरुद्ध हैं।' जबकि होना चाहिए– "सभी विकासशील देश साम्राज्यवाद और विदेशी आधिपत्य के विरुद्ध हैं।" यद्यपि अंग्रेजी शब्द 'occupation' व्यवसाय और आधिपत्य दोनों अर्थों में प्रयुक्त शब्द हैं किन्तु दुभाषिया को वक्ता के पूर्वापर प्रसंग और संदर्भ से अर्थ तय करना चाहिए। भाषिक विश्लेषण दुभाषिया को वक्तव्य की भाषागत यूनिटों का आग्रही बनाता

---

1. Translation means recodification.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

है। यद्यपि दुभाषिया के पास वक्ता के भाषण के शब्दों, पदबन्धों आदि के गम्भीर विश्लेषण का समय नहीं होता, फिर भी उसे वक्तव्य में प्रयुक्त मुहावरों, सूक्तियों और लोकोक्तियों पर तुरंत ध्यान देना होता है ताकि वक्ता का व्यंग्यार्थ स्पष्ट किया जा सके। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के कुछ अटपटे प्रयोग द्रष्टव्य हैं–

(1) I am listless का 'मैं सूचीपत्रहीन हूँ।' अनुवाद गलत होगा ।सही अनुवाद होगा "मैं उदास हूँ।" अंग्रेजी के लाक्षणिक प्रयोग आसानी से समझ में नहीं आते। उदाहरण के लिए दो शब्दों को लिया जा सकता है– "Impossible and difficult" सामान्यतः इन शब्दों का अर्थ है – 'असंभव और कठिन' परन्तु अटपटे भाषिक गठन और लाक्षणिक प्रयोगों से इनके अर्थ बिल्कुल बदल जाते हैं, यथा– you are impossible, यहाँ Impossible का अर्थ असंभव नहीं असह्य या असहनीय या दारुण है। सामान्यतः अनुवाद किया जाएगा– "you are impossible.– तुम असंभव हो "जबकि सही अनुवाद होगा– "तुम असह्य हो।" इसी तरह "you are difficult का अनुवाद "तुम कठिन हो" गलत होगा। सही अनुवाद होगा। "तुम दुःसाध्य हो।"

भाषिक संरचना और प्रयोग के आधार पर बहु–प्रयुक्त शब्द भी अलग अर्थ देता है, उदाहरण के लिए अंग्रेजी शब्द 'Love' का अर्थ मात्र प्रेम या प्रेम करना ही नहीं है, 'सम्भोग' करना भी है। यहाँ दो वाक्य लिए जा सकते हैं–

(i) I love you. मैं तुम्हें प्रेम करता हूँ।

(ii) She submitted herself to his love because she had been too helpless to resist him. यहाँ Love का अर्थ शारीरिक संबंध है मात्र प्रेम नहीं। और "Submitted herself to his love." वाक्यांश का अर्थ है उसने विवश होकर अपना शरीर समर्पित कर दिया।

कुल मिलाकर कहना यह है कि अर्थगत और भाषागत विश्लेषण की प्रक्रिया से दुभाषिया को भी गुज़रना पड़ता है भले ही वह मानसिक ही हो। व्याकरणिक विश्लेषण का अवकाश उसके पास नहीं होता किन्तु स्रोत भाषा के मुहावरों, लाक्षणिक प्रयोगों आदि की सही पकड़ उसके लिए अनिवार्य होती है। इसीलिए दुभाषिया को स्रोत–लक्ष्य भाषाओं का गंभीर जानकार होना चाहिए।

(ब) अन्तरण : अनुवाद प्रक्रिया का दूसरा चरण अंतरण है। सामान्य वाक्यों का अंतरण आसान होता है, जैसे कि Mahabharat was written by Ved Vyas– महाभारत वेद व्यास द्वारा लिखी गई। किन्तु प्रोक्ति विश्लेषण और लाक्षणिक अभिव्यक्तियों के

---

1. किसी प्रोक्ति में दो तरह की अभिव्यक्तियाँ हो सकती हैं– अंतः केन्द्रित (Endo–centric) अभिव्यक्ति, जिसमें शब्दों के अर्थ बाहर न खोजने पड़ें अर्थात् साधारणः कथन तथा वहिर्केन्द्रित (Exo–centric) जिसमें भाषिक इकाई का अर्थ बाहर खोजना पड़े अर्थात् लाक्षणिक प्रयोगादि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अनुवाद में दुभाषिया को सोचना पड़ता है और कभी-कभी उसे गूढ़ार्थ प्रधान बहिर्केन्द्रित (Exo-centric) अभिव्यक्तियों[1] की व्याख्या भी करनी होती है। किन्तु यह व्याख्या ऐसी होनी चाहिए, जो श्रोताओं को व्याख्या जैसी न लगे। इस संबंध में इलियट के विचार पथ-दर्शक हो सकते हैं। उनकी दृष्टि में "व्याख्या उतनी ही होनी चाहिए जिससे पाठक/श्रोता को वक्तव्य के उन तथ्यों की जानकारी भी हो सके जो उसे व्याख्या के अभाव में न हो पाती।"[1]

अंतः केन्द्रित भाषिक इकाइयों का अनुवाद दुभाषिया के लिए वहुत सरल होता है, यथा-

Thousands of people	assembled	to hear
1	2	3

the great national leader pandit Nehru
4

महान राष्ट्रीय नेता पं. नेहरू को	सुनने के लिए	हजारों लोग	एकत्र हुए
1	2	3	4

बहिर्केन्द्रित अभिव्यक्ति में भाषिक इकाइयों का अर्थ बाहर खोजना पड़ता है। वस्तुतः लोकोक्तियाँ, मुहावरे, गूढ़ार्थ और व्यंग्य प्रधान अभिव्यक्तियाँ तथा भाषा के लाक्षणिक प्रयोग ही बहिर्केन्द्रित अभिव्यक्तियाँ होते हैं, जिनका शब्दानुवाद न करके भावानुवाद करना चाहिए अर्थात् अंतरण प्रक्रिया में दुभाषिया का लक्ष्य साधारण शब्दानुवाद न होकर मूलार्थ व्यंजक अनुवाद होना चाहिए। उदाहरण के लिए अंग्रेजी वाक्य Ultimately his prayers were answered. का अनुवाद- 'अंततः उसकी प्रार्थनाओं का उत्तर मिल गया' नहीं किया जाना चाहिए। सही अनुवाद होगा- "अंततः उसकी प्रार्थना सुन ली गई।" इसी तरह Her voice was poisonously honeyed. उसकी आवाज मानो मीठी छुरी थी। A bad workman quarrels with his tools.- नाच न जाने आँगन टेढ़ा आदि सही अनुवाद होंगे।

दुभाषिया को वक्ता के शब्द चयन और प्रयोग अर्थात् वक्ता की शैली की ओर भी बराबर ध्यान रखना चाहिए। स्रोत भाषा के वक्तव्य में तत्सम, तद्भव, देशज़ आदि जिस प्रकार के शब्दों का प्रयोग हुआ हो लक्ष्य भाषा में उसी प्रकार की शब्दावली का अनुप्रयोग होना चाहिए।

(स) पुनर्गठन

अनुवाद प्रक्रिया में दुभाषिया को कभी-कभी पुनर्गठन अथवा पुनर्रचना भी करनी होती

1. **Interpretation is only legitimate when it is not interpretation at all, but merely putting the reader inpossession of facts, which he would otherwise have missed.**

T.S. Eliot-selected prose.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

है अर्थात् स्रोत भाषा के वक्तव्य की अटपटी, अस्पष्ट और गलत अभिव्यक्तियों को लक्ष्य भाषा में सहज समतुल्य अभिव्यक्तियों से अंतरित करना। वस्तुतः अनुवाद प्रक्रिया के सभी चरण आशु अनुवाद में भी अपेक्षित होते हैं किन्तु मानसिक स्तर पर दक्ष दुभाषिया के मस्तिष्क में अनुवाद–प्रक्रिया निर्बाध गति से गतिमान रहती है और आशु अनुवाद सहज ही स्फुरित होता रहता है। इस संबंध में उदाहरण से बात स्पष्ट की जा सकती है– भोज़ के संबंध में एक व्याख्यान का आशु अनुवाद यहाँ प्रस्तुत है, यथा

Mr. President, distinguished scholars sitting on the dias. ladies and gentleman gathered here and friends. To speak about Bhoj, the King, the aesthetician and scholar is a difficult task. It needs a great learning, interpretative and penetrating, deep insight. And I should admit my shortcomings as a scholar of Sanskrit literature which is a wide ocean.

Bhoj was a great aesthetician and king. Infact royalty was not a major component of his greatness. He was great in his own right. If Bhoj, the king, shot into prominence in history through the accident of his kingship, Bhoj, the man, literally made history through his native talents and showed to the world that his achievements were great.

He was a great builder, a great scholar,a great poet,a great critic,a great virtuos a great scientist, a great experimenter, a great thinker and, above all, a great humanist and a great giver. Two different recorded traditions credit him with having built 84 and 104 buildings (temples?) The former number is confirmed by Madana, the court poet and preceptor of Arjunavarman, an illustrious successor, who came two centuries after Bhoj. In his play Parijatmanjari, engraved on the stone–slabs of the famous Bhojsala, the author specifically speaks of 84 temples in the city of Dhara and refers to the temple of Saraswati as the chief among them. This temple aptly named Saraswati–Kanthbharana, and the superb Saraswati idol installed in it must have been the apple of Bhoj's eye. Its distinction lay not in its size nor even in its architectural excellence but in the spirit it enshrined and nurtured. It witnessed for nearly a half–century the rare scene of the cream of the country's intellect collected and canalized for a phenomenal creative effort, never before attempted and, perhaps, never again to be attempted. Even after Bhoj the great, traditions of this epoch–making institution were preserved and continued for a long time of his paramara successors for over two centuries. The best proof of this is provided by the stone–slab engravings, contemporary literary creations, which continued to be added to the walls of

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

this Bhojsala right up to the days of–Arjunavarman, mentioned earlier. After three centuries of existence, this temple–cum-palace, which symbolised one of the passionate sky–scrapper dreams of Bhoj was demolished by later Muslim conquerors, who overran Dhara and restructured it to the mosque, which survives today as a Kamal Moula mosque. And the exquisite sculpture of Vagdevi too became a victim of inconoclastic vandalism and lay buried there for over five centuries until modern archaeology recovered it in its badly mutilated condition during the reign of Lord Curzon and sent it to London. It is now a prized piece of the British Museum. Deep–rooted popular traditions die hard. The memory of the previous history of the mosque survives to this day in Dhara, where the local people still speak of it as Bhojsala.

Desire of the fame is the common weakness of the great. Bhoj was no exception to it. He appears to have left. no stone unturned to perpetuate his name and achievements through such stone edifices and the many inscriptions in them. But more than these inscriptions on stone, it is his numerous copperplate grants and his equally numerous books with their truly encyclopaedic range which keep his name alive today as a great 'giver' on the one hand and as a great writer on the other. As for pious philanthropic gifts, his none–too–few copper-plates tell their legendary tale. In its typical hyperbolic tone, the Bhojprabandha declares: "Only two things were scarce in Bhoj's land; first was iron used up in making fetters for his enemies and the second was copper, which got exhausted through his grantplates." It is significant that Bhoja's copper–plates continue to be discovered from the villages of Malva to this day. Only recently, Indore Museum has added one such copper plate to its collection and one renowned archaeologist of Ujjain has rescued another from being melted off! One wonders how many grant–plates might have passed to ignorant hands, to whom the metal content was more important than the historical value of engraved lines.

सभापति महोदय, मंच पर विराजमान गणमान्य विद्वान तथा सभागार में उपस्थित, देवियों, सज्जनों और मित्रों! सौन्दर्यशास्त्री और विद्वान राजा भोज के सन्दर्भ में व्याख्या करना एक अत्यन्त कठिन काम है, इसके लिए गंभीर अध्ययन, व्याख्यात्मक और गहन प्रवेशदर्शी बुद्धि की आवश्यकता है। एक संस्कृत विद्वान के रूप में मैं अपनी निर्बलता स्वीकार करता हूँ, क्योंकि संस्कृत साहित्य एक महासागर है।

भोज एक महान सौन्दर्यशास्त्री और राजा थे। भोज की महानता उनकी राज सत्ता तक ही सीमित नहीं है, वे अपने गुणों के कारण महान थे। यदि भोज ने राजा के रूप में राजनैतिक

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

घटनाओं के द्वारा इतिहास में श्रेष्ठता प्राप्त की तो उन्होंने एक व्यक्ति के रूप में अपनी विशेषताओं से इतिहास की रचना की है। भोज ने जीवन के जिस भी क्षेत्र में पदार्पण किया, उसमें सफल रहे और उन्होंने प्रमाणित किया कि उनकी उपलब्धियाँ उच्च-कोटि की थीं।

भोज एक महान निर्माणकर्ता, विद्वान, कवि, आलोचक, वैज्ञानिक, प्रायोगिक, विचारक और सर्वोपरि महान मानववादी एवं दाता थे। उन्होंने तद्‌युगीन प्रचलित वास्तुकलाओं में क्रमशः 84 एवं 104 भवनों (मंदिरों) का निर्माण कराया। भोज की वंशावली में भोज से लगभग दो शतक पश्चात् महान राजा अर्जुन वर्मन के राज कवि मदन ने प्रथम संख्या की पुष्टि की है। कवि ने अपने नाटक 'पारिजात मंजरी' जो भोजशाला की दीवारों पर नक्काशी के द्वारा चित्रित है, में वर्णित किया है कि धारा नगर के 84 मंदिरों में सरस्वती का मंदिर सर्वाधिक भव्य है। इस मंदिर का नाम सरस्वती कण्ठाभरण उचित ही है क्योंकि इसमें सरस्वती देवी की अत्यन्त भव्य मूर्ति स्थापित है। इसकी विशेषता इसके आकार एवं वास्तुकला में नहीं वरन् इसकी भावोत्पादक मुद्रा में है। लगभग अर्ध-शतक तक यह मंदिर दुर्लभ दृश्य का केन्द्र रहा है जहाँ पर देश की ज्ञान सरिता समाहित होकर निर्माण के लिए स्रोत का कार्य करती थी। इसके पूर्व इस प्रकार का प्रयास न किया गया था और कदाचित भविष्य में न कभी किया जा सकेगा। भोज के पश्चात् लगभग दो सदियों तक परमार राजाओं ने इसी युगान्तकारी परम्परा को किसी न किसी रूप में जीवित रखा। इसका सबसे अच्छा प्रमाण यह है कि अर्जुन वर्मन के काल तक शिलाओं पर विशिष्ट साहित्यिक कृत्यों को अंकित कर भोजशाला की दीवारों में उन्हें स्थापित करने की क्रिया चलती रही। तीन सदियों के अस्तित्व के पश्चात् यह देव मंदिर एवं प्रासाद मिश्रित भवन जो भोज के स्वप्नों की उत्तुंगता का प्रतीक था, यवन विजेताओं के द्वारा ध्वस्त कर दिया गया। धारा पर यवनों का आधिपत्य हो गया तथा इस भवन को मस्जिद का रूप दे दिया गया, जिसे इस समय कमाल मौला मस्जिद कहते हैं। वाग्देवी की मूर्ति आततायियों एवं मूर्ति-भंजकों की उच्छृंखलता का शिकार हो गयी तथा लगभग पाँच सौ वर्षों तक दबी पड़ी रहने के उपरान्त पुरातत्त्व विभाग के द्वारा खुदाई कराने पर इसे लार्ड कर्जन के समय में प्राप्त किया गया। यह मूर्ति क्षत-विक्षत स्थिति में मिली तथा इस समय इंग्लैण्ड के संग्रहालय की बहुमूल्य वस्तु है। अत्यन्त गहरी लोक परम्पराओं का अन्त कठिन होता है। मस्जिद का पूर्व इतिहास लोगों के मस्तिष्क में आज भी है और धारा में स्थानीय लोग इसे आज भी भोजशाला कहते हैं।

ख्याति की इच्छा मानव की सामान्य दुर्बलता है। भोज भी इसके अपवाद नहीं थे। उन्होंने अपने नाम एवं उपलब्धियों को चिर स्थायी बनाने के लिए कोई कसर बाकी नहीं रखी। उन्होंने भवनों में शिलालेख निर्मित कराये। इन शिलालेखों के अतिरिक्त असंख्य ताम्रपत्र एवं पुस्तकें उनके नाम को महान दानी, युग निर्माता एवं रचनाकार की भाँति आज भी जीवित रखे हुए हैं। भोज के ताम्रपत्र उनकी जन कल्याणकारी कार्यों की कहानी बताते

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हैं। भोज प्रबन्ध में स्वाभाविक अतिशयोक्ति के साथ यह उल्लेख मिलता है कि भोज के राज्य में केवल दो वस्तुओं की कमी थी– लोहा व ताँबा। लोहा भोज के शत्रुओं के लिए जंजीर व हथकड़ी बनाने तथा ताँबा, ताम्रपत्रों के अनुदान में देने के कारण कम हो गये थे। यह महत्त्वपूर्ण बात है कि भोजकालीन ताम्रपत्र आज भी मालवा के ग्रामों में पाये जाते हैं। हाल ही में भोज युगीन ताम्रपत्र इन्दौर संग्रहालय में रखा गया है तथा एक अन्य ताम्रपत्र उज्जैन के विख्यात पुरातत्व विशेषज्ञ ने गलाये जाने से बचाया है। यह नहीं कहा जा सकता कि इस तरह के न जाने कितने ताम्रपत्र उन अनभिज्ञ व्यक्तियों के हाथों में पहुँचे गये, जिनके लिए पत्र का आर्थिक मूल्य उस पर अंकित ऐतिहासिक मूल्य से अधिक था।

उक्त अनुवाद से स्पष्ट है कि यहाँ दुभाषिया ने आशु–अनुवाद करते समय, कथ्य और अर्थ सम्प्रेषण पर अधिक बल दिया है, शब्दों और पदबंधों पर कम। दुभाषिया कर्म में यही प्रयोज्य होता है। इसी क्रम में विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में दीक्षांत सम्बोधन का एक उदाहरण यहाँ और द्रष्टव्य है।

HIS EXCELLENCY THE CHANCELLOR, MR. VICE–CHANCELLOR, HON'BLE MEMBERS OF THE SENATE AND SYNDICATE, DEANS AND DISTINGUISHED MEMBERS OF THE FACULTIES, YOUNG GRADUATES AND GUESTS.

As I rise to address this august gathering at the University, to which I have the privilege to belong nostalgia and emotions overwhelm and get the better of me. If you ask me to identify the most over–powering feeling, it is one of sheer unadulterated humility. As a former student of this great University, where I got initiated into the fundamentals of legal theory and practice, it is a matter of privilege to address you. On a personal note please do allow me to say how deeply moved I am by the great honour that your Chancellor and Vice–Chancellor have done in inviting me to address this convocation and to provide me an opportunity to congratulate you on the award of the degrees and medals which the University has bestowed upon you.

The Lucknow University has a glorious record. It is one of the oldest universities with inspiring achievements. During the last 75 years, this University, more than any other University in the country, has succeeded in developing a distinctive quality: the spirit of national unity. It has been a premier centre of higher education in the country.

I take this opportunity, when I am among my own to confirm my great faith in educational institutions as the shapers of destinies of individuals and nations. Universities are great centres of learning and

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

excellence. It disturbs and distresses me when the youth of today express their cynicism and scepticism about degrees and the system of education, because to my mind this arises from a confused perspective and a myopic view. There is certainly always room for re–assessment and reform in every system. The process of education, like any other activity, must be dynamic and respond to social change but to lose faith in it is symptomatic of a negative attitude which no society or nation should allow to invade it being unless it wants to be eaten up.

It appears to me that the feeling of disillusionment, that is expressed by the youth, is because they look upon education only as a means to a very narrow end – a lucrative career. No doubt that should be a major concern particularly in an over–populated developing country like ours, but education has to be looked upon not only as a means to a defined goal but as a self–elevating experience. The years, that an individual spends pursuing and imbibing knowledge, lay the foundation for much more. It is only at the time of formal institutional learning that there is an opportunity to acquire a spirit of enquiry–of scientific endeavour–of lessons of history–of philosophical objectivity and a sensitivity to issues larger than just earning a living. Wisdom is not merely acquiring knowledge but learning how to use it for the benefit of mankind. The remarkable opportunity that is available in the universities for interaction with individuals from a vast segment, enables one to take a more holistic view and to strive towards a just and humane society. There cannot be any gain saying that only what is just is right and only what is right and balanced can be protective of the correct and can lead to ensuring that the quality of life is better. It is in the universities that a person must learn to look beyond his immediate universe and absorb the widsom down the ages which lies enshrined in scholarly works.

There is a unique opportunity to look at today's issues with the transcendental wisdom that is available in great works of philosophy, literature and scientific knowledge. It is also the time to develop a total personality and an appreciation of the beauty enshrined in the works of art and literature. I very strongly feel that at this stage of life the youth can set goals not only for personal ambition, but for the ideals and values of a free society. Education equips a person to have a more catholic view of life by rising above parochial considerations. An individual must appreciate that he exists as a part of much larger whole to which he has a responsibility. Over the ages, scholarship and erudition have emanated

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

from institutionalised education, be it the monastic tradition or modern set–up.

However, while unconditionally putting my entire faith in education and its institutions, I do feel that we must strive towards making the system more socially relevant. It must equip an individual not only to face his personal challenges and realise legitimate ambitions, but also to strive towards grappling with large issues of alleviation of poverty, upholding of personal freedoms and cultivation of democratic values. I am sorry to observe that at present the University system has buckled under the pressure of circumstances and has contended itself to the role of merely awarding degrees and diplomas, without paying proper attention to the future fate of students. The universities appear to be satisfied merely by teaching subjects which may enable the passouts to help in the running of various establishments. It is a rather disturbing feature of the present day and has far–reaching consequences. Unless all persons holding responsible posts in the universities and colleges give a second look and take remedial measures to imporve the system, keeping in view the technological revolution and globalization of the economy and bring about desired reforms, the country is bound to pay a heavy price.

Today a stage has come in the evolution of the political life of our country, where it is being increasingly felt necessary to re–ask some of the basic questions as to the purpose of Government and as to the legitimacy of the choice of the form of Government. The people, as the political sovereign acting though their elected representatives in the Legislature, are supposed to control the political machinery. However what we find is that the will of the people is merely to set up as a mystical God in whose names the political priests of a new obligatory struggle and rule. Democratic institutions are delicate and fragile. European history, even as recently as in the thirties, has demonstrated that democracy contains within itself the germs of its external facade. The educated and the intellectuals, therefore, must come forward to give the lead and not merely contend themselves by their own advancement. They must discharge their debt to the nation and must not be allowed to adopt the attitude of couldn't careless A heavy responsibility rests upon shoulders to carry the torch forward and to blaze new trails so that the future generations may have reasons to remember you with pride. While at this topic, let me share with you a vital matter of concern. Imbalance is created when power gets concentrated in a few hands any

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

where.

The ecological balance is upset, which, in turn, leads to social disorganization. It manifests itself in deviant behaviour of crime and the like which are totally destructive of the values of a free and just society and strike a blow to the dignity of the individuals. 'Without a sense of social and ethical responsibility that goes with the possession of all power, all power can be self destructive in whosoever's hands it may be. Throughout ages, abuse of power has existed as a phenomena and not necessarily because of any oblique motives, but more often because of lack of accountability, be it the Executive, Legislature or the Judiciary. Lack of accountability has always given room to despotism and chaos. If a society reaches a stage where nothing higher than mere force ensures obedience to Government, where the moral limits of the States authority becomes, suspect or where the very legitimacy of the political organization and governmental authority is assailed–remblings hold serious portents for the future and the very survival of an orderly society is at stake. It is a lesson of history that in the absence of accountability society lives in constant dread of an impending disaster. There, thus, must be accountability to law. It is now your responsibility to educate public opinion regarding need for accountability and transparency of actions. In it lies the stability of the nation.

We, in this country, are committed to preserve human dignity. This is the moral-ethical foundation of the Indian tradition. Universal standard of morality, which is godness for goodness sake and which accepts love for all as an ideal in itself, is a fundamental moral principle. Fortunately, India is a country where people have shown rare sensitiveness and resilience to perversion of democratic values whenever the same have faced threats, which is a striking contrast to the emerging democracies in the neighbourhood. Such strength, as we have seen, is traceable to the great and unforgettable contribution made by the Father of the Nation, Mahatma Gandhi, who brought political awareness at the door steps of every Indian home. It is a privilege of youth of today to protect those great values and unity of the nation. Disillusionment kills ideas. It is cynicism born out of disillusionment that has made the youth today irrelevant to ideals, scholarship and values and has slackened their moral fortitude. I implore the youth of the country today in general and the young graduates present here in particular to develop faith in the future of India for they are the future and by practising right values they

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

assure the safety of the future.

The progress and prosperity of the country depends on the character and the equipment of those who are expected to lead the people. Let me assure you that the practice of proper value system and the path of righteousness will always brighten the intellect because without parctice of virtue, human reason is not capable of growth. Vice on the other hand darkens the intellect. Intellect without a perception of proper means can be self-defeating. Intellect possesses an extraordinary capacity for rationalization. We must, therefore, strive to have proper perception in tune with our cultural heritage and our value system. The practice of virtue and adherence to moral absolutes unfolds tremendous hidden energy of man. Adoption of this way of life with humility and reverence has its own immense rewards. Most of the ills that the society faces today are because we have taken to the easy course and drifted away from following the proper value system and there is loss of character. We need not however lament. We can reprive the situation. It is in our hands. Let us make the beginning today itself. One must always have positive attitude to life. Compassion in public life and contentment in personal life are the much needed values. Let us harmonise our speech and action for pure thoughts which are the true treasure of life. Let us all strive to lead disciplined and enlightened lives. Let us not forget that we have inherited a great culture and civilization and that it is our duty to maintain high standards of character and culture. Let us work unitedly for the upliftment of our Mother Land laying aside sectional, communal or religious differences.

To my young friends, the fresh graduates, I sincerely say that they must realize that it is easy to be a Hero than a Gentleman. On this eventful day of our life, it is my hope and prayer to the Almighty that you get strength to be great Gentlemen to cultivate the great virtues of honour, dignity and friendship and to inculcate in your lives a sense of justice and high purpose so that you can discharge very significant responsibilities in upholding our basic national objective of democracy, secularism and socialism. May the Almighty grant you that great privilege of being nobel and worthy and make the lives of each one of you virtuous and prosperous. I wish you all good luck and Godspeed.

महामहिम कुलाधिपति, कुलपति महोदय, सीनेट और सिंडीकेट के सम्मानित सदस्यों, संकायाध्यक्षों, संकायों के लब्धप्रतिष्ठ सदस्यों, स्नातकों तथा अतिथियों!

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

आज जब कि मैं उस विश्वविद्यालय की महान सभा को सम्बोधित करने जा रहा हूँ, जिससे जुड़े रहने का सौभाग्य मुझे भी प्राप्त हो चुका है मेरा मन अपने ही घर की पुरानी यादों और भावनाओं से अभिभूत है। वस्तुतः मैं अपनी इस भावना को और कुछ न कहकर विशुद्ध विनम्रता ही कहूँगा। इस विश्वविद्यालय का पूर्व छात्र होने के नाते, जहाँ से मैंने कानून के मौलिक सिद्धान्त और व्यवहार को सीखा है, मेरे लिए यह अत्यंत सौभाग्य का विषय है कि मुझे आपको सम्बोधित करने का सुअवसर प्राप्त हुआ है। व्यक्तिगत तौर पर मैं आपके कुलाधिपति और कुलपति महोदय का अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मुझे इस दीक्षांत समारोह में आमंत्रित कर मुझे आप सभी को विश्वविद्यालय द्वारा प्रदत्त उपाधियों, पदकों और पुरस्कारों को वितरित करने तथा आप सभी को एक स्वर्णिम भविष्य के लिए बधाई देने का सुअवसर प्रदान किया।

लखनऊ विश्वविद्यालय का अपना अभूतपूर्व इतिहास रहा है। यह उन विश्वविद्यालयों में से एक है, जिनकी उच्च उपलब्धियाँ रही हैं। विगत पचहत्तर वर्षों में यह विश्वविद्यालय देश के किसी भी अन्य विश्वविद्यालय की अपेक्षा उत्कृष्ट शिक्षा और उच्च राष्ट्रीय एकता की भावना को विकसित करने में पूर्ण रूप से सफल हुआ है। इस विश्वविद्यालय ने देश में उच्च शिक्षा के केन्द्र के रूप में एक कीर्तिमान स्थापित किया है।

आज जब मैं अपनों के मध्य हूँ तो मैं यह जरूर कहना चाहूँगा कि राष्ट्र और व्यक्ति के भाग्य निर्माता के रूप में शैक्षणिक संस्थानों का अप्रतिम योगदान रहा है। विश्वविद्यालय ज्ञान और विद्या के मंदिर होते हैं। किन्तु वर्तमान समय में शिक्षा व्यवस्था और डिग्रियों के प्रति युवाओं में उत्पन्न अरुचि और अविश्वास को देखकर मैं बहुत चिंतित और दुःखी हो जाता हूँ। जहाँ तक मेरा विचार है इसका एक ही कारण हो सकता है और वह है भ्रमित परिप्रेक्ष्य और अदूरदर्शी दृष्टिकोण। मेरा यह निश्चित मत है कि प्रत्येक व्यवस्था में सुधार और पुनर्मूल्यांकन की गुंजाइश होती है। शैक्षिक प्रक्रिया किसी अन्य व्यवस्था की भाँति गतिशील और स्वस्थ सामाजिक परिवर्तनों को ग्रहण करने वाली होनी चाहिए किन्तु किसी देश या समाज को हमेशा इस बात का भी ध्यान रखना होगा कि इसमें नकारात्मक और अस्वस्थ मनोवृत्तियाँ हावी न हो जाएँ अन्यथा वह (अस्वस्थ मनोवृत्ति) सारी व्यवस्था को निगल जाएगी।

मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि शिक्षा के प्रति युवाओं की भ्रमित मनोवृत्ति और अरुचि का कारण शिक्षा के प्रति उनका एकांगी दृष्टिकोण ही है। वे शिक्षा को केवल लुभावना पेशा (जीविका) प्राप्त करने का माध्यम मानते हैं। निस्संदेह भारत जैसे देश में, जिसकी जनसंखया दिन–प्रतिदिन सुरसा के मुख की भाँति बढ़ती जा रही है, यह चिंता का मुख्य विषय हो सकता है किन्तु शिक्षा केवल आजीविका प्राप्त करने का माध्यम नहीं है, वह तो आत्मोन्नति और आत्मविकास का माध्यम है। जितने अधिक वर्ष कोई व्यक्ति

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इस ज्ञान की खोज में लगाता है उसका आधार उतना ही दृढ़ होता है। औपचारिक शिक्षा प्रारम्भ होने के समय से ही व्यक्ति को वैज्ञानिक प्रयासों, इतिहास के पाठों, दार्शनिक यथार्थवाद के द्वारा यह अनुभव करने का सुअवसर प्राप्त होता है कि शिक्षा मात्र जीविकोपार्जन का साधन नहीं है वरन् वह इससे कहीं बढ़कर कुछ और है। विद्या का संबंध केवल ज्ञान प्राप्त करना नहीं है वरन् लोकहित में उसका समुचित उपयोग भी है। विश्वविद्यालयों में व्यक्ति को एक छोटे स्तर से उठकर बड़े स्तर पर लोगों से मिलने–जुलने और एक दूसरे को प्रभावित करने का सुअवसर प्राप्त होता है, जिससे उसके व्यक्तित्व का विकास होता है। उसे सोचने समझने की एक नयी दृष्टि प्राप्त होती है। और इस प्रकार वह एक स्वस्थ समाज का सुसभ्य नागरिक बनने के योग्य हो जाता है। यहाँ यह कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि जो तात्कालिक है वही उचित है और जो उचित और संतुलित है केवल वही साधुवृत्ति की रक्षा करते हुए उत्कृष्ट जीवन सुनिश्चित कर सकता है। विश्वविद्यालयों में ही व्यक्ति वर्तमान से परे अतीत में झाँकना सीखता है और अपने पूर्ववर्ती विद्वानों के द्वारा संचित ज्ञान राशि को ग्रहण करता है।

विश्वविद्यालयों में हमें वर्तमान समस्याओं को विज्ञान, साहित्य और दर्शन में उपलब्ध ज्ञान के द्वारा मीमांसात्मक दृष्टि से परखने का ही सुअवसर प्राप्त नहीं होता वरन् हमारे सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास भी यहीं होता है और हम कला एवं साहित्य में निहित उत्कृष्टता एवं सुन्दरता की अनुभूति भी यहीं कर पाते हैं। मेरा यह मानना है कि इस अवस्था में व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षा को पूरा करने के लिए ही नहीं वरन् स्वतंत्र एवं आदर्श समाज के निर्माण के लिए भी लक्ष्य निर्धारित कर सकता है। शिक्षा व्यक्ति के संकीर्ण विचारों को नष्ट कर उसे सार्वभौमिकता की ओर अग्रसर करती है। व्यक्ति को इस बात का हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि उसका अस्तित्व सीमित स्वार्थ के लिए नहीं है वरन् उस विश्वजनीन दृष्टिकोण के लिए है जिसका उत्तरदायित्व उस पर है। युगों से ही विद्या और ज्ञान का प्रादुर्भाव संस्थाओं से ही हुआ है वह चाहे प्राचीन मठीय व्यवस्था हो अथवा आधुनिक विश्वविद्यालयी व्यवस्था।

वस्तुतः शिक्षा और उसकी संस्थाओं में मुझे पूर्ण विश्वास है अतः मैं अनुभव करता हूँ कि शैक्षिक व्यवस्था को और अधिक समाजसंगत बनाने की दिशा में प्रयास करना होगा। शैक्षिक व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए जिससे व्यक्ति न केवल निजी चुनौतियों को स्वीकार कर अपनी उचित महत्त्वाकांक्षाओं को पूरा कर सके वरन् उच्च सामाजिक आदर्शों जैसे–निर्धनता उन्मूलन, व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं प्रजातांत्रिक मूल्यों की रक्षा भी कर सके। किन्तु वर्तमान परिस्थितियों में मुझे यह देखकर अत्यंत दुःख होता है कि विश्वविद्यालयी व्यवस्था विपरीत परिस्थितियों का शिकार हो गयी है और उसका उद्देश्य छात्रों के भविष्य की चिंता किये बिना केवल डिग्री और डिप्लोमा बाँटना भर रह गया है। विश्वविद्यालयों में अब केवल उन्हीं विषयों को पढ़ाया जा रहा है, जो विभिन्न

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संस्थानों में चलाए जाने में सहायक हैं।

वर्तमान समय की यह स्थिति क्लेशकारी है और इसके दूरगामी परिणाम होंगे। यदि महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों में उच्च पदों पर आसीन लोगों ने इस स्थिति पर गौर नहीं किया और शैक्षिक व्यवस्था में तकनीकी क्रांति तथा आर्थिक वैश्वीकरण के परिप्रेक्ष्य में संभावित सुधार लाकर उसके स्तर को सुधारने के उपाय नहीं किए तो देश को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी।

आज हमारे देश में राजनीतिक तंत्र के विकास की समीक्षा का भी समय आ गया है। सरकार का उद्देश्य, उसकी वैधानिकता और सरकार के स्वरूप आदि जैसे कुछ मौलिक प्रश्नों को पुनः उठाने की आवश्यकता आज महसूस की जा रही है। यह माना जाता है कि राजनैतिक रूप से संप्रभु प्रजा का विधायिका में अपने द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों के द्वारा राजनैतिक व्यवस्था पर नियंत्रण होता है किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं होता। जन इच्छा तो केवल एक रहस्यमय ईश्वर की भाँति हो गयी है, जिसके नाम पर राजनैतिक पुजारी संघर्ष करते हैं और शासन करते हैं। प्रजातांत्रिक संस्थाएँ लचीली और कमजोर होती हैं। विगत तीस वर्षों का यूरोपीय इतिहास इस बात का प्रमाण है कि प्रजातांत्रिक व्यवस्था में भी कुछ ख़ामियाँ होती हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि शिक्षित और प्रबुद्ध वर्ग आगे आए और नेतृत्व करे। उसे सिर्फ स्वप्रगति से ही संतुष्ट नहीं हो जाना चाहिए वरन् राष्ट्र के प्रति अपने कर्त्तव्य को ध्यान में रखना चाहिए। केवल लापरवाही से 'हम क्या कर सकते हैं?' कहकर आप स्वयं को उस ऋण से मुक्त नहीं कर सकते। यह आपके कंधों पर महत्त्वपूर्ण जिम्मेदारी है और इसे आपको आगे निभाना है ताकि भावी पीढ़ियाँ आप पर गर्व कर सकें। यह हम सभी के लिए एक विचारणीय विषय है। जब कभी शक्ति कुछ हाथों में केन्द्रित होती है तो असंतुलन की स्थिति उत्पन्न होती है।

पारिस्थितिक संतुलन बिगड़ने से सामाजिक विघटन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप अपराध और सामाजिक कुरीतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जो उच्च सामाजिक व्यवस्था को पूर्ण रूप से नष्ट कर देती हैं और व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सम्मान पर भी कुठाराघात करती हैं। सामाजिक और नैतिक मूल्यों से हीन किसी भी व्यक्ति के पास जब सत्ता आ जाती है तो वह स्वविनष्टकारी ही होती है वह व्यक्ति चाहे कोई भी क्यों न हो। युगों युगों से सत्ता के दुरुपयोग के दृश्य उपस्थित हुए हैं किन्तु सत्ता के दुरुपयोग के कारण हमेशा गलत उद्देश्य नहीं थे बल्कि कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका में उत्तरदायित्व/जवाबदेही की भावना का अभाव था। अनुत्तरदायित्व की स्थिति ने हमेशा ही अव्यवस्था और तानाशाही को जन्म दिया है। कोई भी समाज जब उस स्थिति में पहुँच जाता है जहाँ सरकार केवल शक्ति के बल पर चलती है तथा शासकों की नैतिक मर्यादाएँ संदेह के घेरे में आ जाती हैं या जहाँ राजनैतिक तंत्र और सरकार की वैधानिकता पर प्रश्न उठने लगते हैं तो यह भविष्य के लिए गंभीर अपशकुन होता है और उस समाज का अस्तित्व दाँव पर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लग जाता है। यह इतिहाससिद्ध तथ्य है कि अनुत्तरदायित्वपूर्ण स्थिति वाला समाज हमेशा सन्निकट विपत्ति के भय से ग्रस्त रहता है। अतः उत्तरदायित्व की भावना का विकास अत्यंत आवश्यक है। लोगों को उत्तरदायित्व की आवश्यकता और कार्यों की पारदर्शिता के बारे में शिक्षित करना अब आप सभी का दायित्व है। और इसी से देश की एकता और अखंडता सुनिश्चित होगी।

हमारे देश में मानव मात्र की गरिमा को बहुत महत्त्व दिया जाता है और यही भारतीय संस्कृति के व्यावहारिक और नैतिक आचरण का आधार है। आचार शास्त्र का सर्वमान्य मानक और आदर्श "भलाई के बदले भलाई है" और मानव मात्र के प्रति प्रेम। यह आचार शास्त्र का मौलिक सिद्धान्त भी है। सौभाग्य से भारत ऐसा देश है जहाँ जब भी प्रजातांत्रिक मूल्यों के सामने संकट उपस्थित हुआ है तो पड़ोसी देशों के विपरीत यहाँ के लोगों ने उनका डटकर सामना किया है और उन्हें पुनः स्थापित किया है। यह अदम्य शक्ति हमें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के अविस्मरणीय योगदानों में देखने को मिलती है। उन्होंने हर भारतीय घर में राजनैतिक जागरूकता का संचार कर दिया था। आज प्रत्येक युवा का दायित्व है कि वह इन महान मूल्यों और देश की एकता की रक्षा करे। विभ्रम की स्थिति विचारों का नाश करती है। यह विभ्रम की स्थिति से ही उत्पन्न पागलपन है जिसके कारण आज का युवा ज्ञान, आदर्शों और नैतिक मूल्यों को औचित्यहीन समझने लगा है और उसका नैतिक धैर्य समाप्त हो गया है। मैं सम्पूर्ण राष्ट्र के युवाओं और विशेष रूप से यहाँ उपस्थित युवाओं का आह्वान करता हूँ कि वह देश के भविष्य में विश्वास रखें। चूँकि युवा ही देश का भविष्य होते हैं और नैतिक मूल्यों का पालन कर वही देश के सुरक्षित भविष्य को सुनिश्चित कर सकते हैं।

किसी भी राष्ट्र की प्रगति और समृद्धि उन लोगों के चरित्र और साधनों पर निर्भर करती है जो उसका नेतृत्व करते हैं। निश्चय ही उचित पथ और नैतिक मूल्यों के अनुपालन से विचार शक्ति आलोकित होती है और तभी मनुष्य की आत्मोन्नति होती है। इसके विपरीत अनैतिक आचरण विचार शक्ति को नष्ट कर देते हैं। अमर्यादित आचरण के अनुपालन से उद्भूत विचार शक्ति स्वविनिष्टकारी हो सकती है। विचार शक्ति में तर्कशक्ति की अद्भुत् क्षमता होती है इसलिए हमें अपनी सांस्कृतिक विरासत और नैतिक व्यवस्था के अनुसार ही आचरण करना चाहिए। उच्च आदर्शों और नैतिक व्यवहार के अनुपालन से मनुष्य में निहित अपार ओज प्रस्फुटित होता है। विनम्रता और श्रद्धा के साथ इस जीवन पद्धति के अनुकरण से अपार आनन्द की प्राप्ति होती है। वर्तमान समाज में व्याप्त अनेक बुराइयों का केवल एक ही कारण है कि हमने सुलभ मार्ग अपनाया और नैतिक मूल्यों को पृथक् कर दिया, जिसकी परिणिति हमारे चरित्र में गिरावट से हुई। किन्तु इस स्थिति पर रोने से काम नहीं चलेगा। हम इस स्थिति को बदल सकते हैं यह हमारे हाथों में है। बस आज से ही इसे प्रारम्भ करने की आवश्यकता है। हमारा दृष्टिकोण सकारात्मक होना चाहिए,

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सार्वजनिक जीवन में संवेदनशीलता और निजी जीवन में संतोष, यह दोनों ही अति आवश्यक मूल्य हैं। हमें अपने वचन और कर्म से एक होना चाहिए क्योंकि शुद्ध विचार भाव ही जीवन की अमूल्य निधि हैं। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि हमारी संस्कृति और सभ्यता महान रही है और यह हमारा दायित्व है कि हम उस संस्कृति के उच्च आदर्शों को बनाए रखें। हमें जाति, धर्म और क्षेत्र के क्षुद्र अंतरों को भुलाकर एकमत से अपनी मातृभूमि के विकास का प्रयास करना होगा।

मेरे युवा मित्रों–नवस्नातकों मैं निष्ठापूर्वक कहता हूँ कि आपको एक दिन यह अवश्य अहसास होगा कि एक भद्र पुरुष होना एक नायक होने से कहीं अधिक दुष्कर है। आज आपके जीवन के इस अभूतपूर्व दिवस पर मैं उस सर्वशक्तिमान ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि वह आप सभी को एक भद्र पुरुष बनने की शक्ति प्रदान करे और आप में मर्यादा और गौरव जैसे महान गुणों का विकास हो सके तथा आपके जीवन में न्याय और महान उद्देश्य जैसी भावनाओं का समादर हो ताकि आप प्रजातंत्र के आधारभूत राष्ट्रीय उद्देश्यों–धर्म निरपेक्षता एवं समाजवाद को ध्यान में रखते हुए अपने कर्त्तव्यों का निर्वाह कर सकें। ईश्वर आप सभी को सुयोग्य एवं भद्र जन बनने का सुअवसर प्रदान करे और आप को सद्‌गुण सम्पन्न एवं समृद्ध बनाए। हमारी आप सभी को शुभ कामनाएँ! साधुवाद!

धन्यवाद!

स्पष्ट है कि उक्त आशु अनुवाद में मुख्य वक्तव्य (स्रोत भाषा) के कई कठिन शब्दों और पदबंधों के लिए लक्ष्य भाषा में समानक और समतुल्य शब्दावली को यहाँ नज़रअंदाज किया गया है जो दुभाषिया की विवशता भी है और दुभाषिया की प्रविधि भी। दुभाषिया का लक्ष्य शब्दशः अनुवाद नहीं होता वरन् अर्थानुवाद होता है। एक ऐसा अनुवाद जो लक्ष्य श्रोताओं को उसी तरह आंदोलित कर सके जैसे स्रोत भाषा के जानकार श्रोता उसको सुनकर हुए होंगे अथवा हो सकते हैं।

आशु अनुवाद का विकास और प्रकार : अनुवाद और आशु अनुवाद के इतिहास पर यदि विचार किया जाये तो तत्काल अनुवाद अथवा आशु अनुवाद का इतिहास लिखित अनुवाद के इतिहास से अधिक प्राचीन प्रमाणित होगा, क्योंकि सभ्यता के प्रारम्भिक चरण में एक भाषा–भाषी समुदाय के लोग जब दूसरे भाषा–भाषी समुदाय से मिलते होंगे तब अपनी बातें दैहिक संकेतों से व्यक्त करते रहे होंगे और दोनों भाषाओं को समझने वाले व्यक्ति की सहायता से दुभाषिया कर्म होता रहा होगा। लिखित अनुवाद की परम्परा बाद में विकसित हुई परन्तु जो आशु अनुवाद यहाँ संदर्भित है, उसका इतिहास बहुत पुराना नहीं है कदाचित् बीसवीं शदी के प्रारम्भिक वर्षों में इसका विकास हुआ। सन् 1919 में फ्रांस की राजधानी पेरिस में शांति सम्मेलन हुआ था। प्रथम विश्व युद्ध समाप्त हुआ था। लोगों के मन में शांति प्राप्त करने की बड़ी उत्कंठा थी फलस्वरूप शांति सम्मेलन में आशु भाषांतरकारों का एक जमघट सामने आया, जिसने विविध भाषा–भाषी देशों के

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

प्रतिनिधियों के बीच दुभाषिया का कार्य किया और शांति–स्थापन में पर्याप्त सहयोग किया। वस्तुतः दुभाषिया प्रविधि का यह विश्व स्तरीय प्रयोग था, जो सन् 1939 के बाद पश्चिम में तेजी से विकसित हुआ।

आशु अनुवाद की प्रविधि का विकास द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अर्थात् 1939–40 के आस–पास हुआ। जर्मन में न्यूरमवर्ग में युद्ध अपराधियों पर जो मुकदमे चलाए गये उस समय दुभाषिया प्रविधि स्पष्ट रूप से विकसित होकर सामने आयी क्योंकि इन मुकदमों के दौरान अभियुक्तों, अभियोक्ताओं, साक्षियों, न्यायाधीशों और अख़बार के संवाददाताओं की भाषाएँ भिन्न–भिन्न थीं। अतः दुभाषियों की सहायता ली गयी और इस प्रविधि का विकास समय की आवश्यकता के कारण अनायास ही हो गया।

आशु भाषांतरण को चार–पाँच हिस्सों में वर्गीकृत किया जा सकता है।

आशु भाषांतरण के प्रकार

1. दो व्यक्तियों के बीच भाषांतरण :– दो व्यक्तियों के बीच त्वरित अनुवाद अथवा आशु अनुवाद तत्काल भाषांतरण का सबसे प्रारम्भिक एवं महत्त्वपूर्ण चरण है। वस्तुतः यह दुभाषिया कर्म का सबसे विशिष्ट रूप है। आशु भाषांतरकार अथवा दुभाषिया ऐसे दो व्यक्तियों के बीच का सम्पर्क सूत्र है जो एक दूसरे की भाषा नहीं जानते। ऐसे दो व्यक्तियों के बीच विचारों का आदान–प्रदान करवाने के लिए दुभाषिया की बहुत महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। विदेशों से आये हुए नेताओं, व्यापारियों, वैज्ञानिकों आदि के बीच दुभाषिया विद्यमान रहता है। परराष्ट्र–नीति, विश्वव्यापार, विश्व स्वास्थ्य संगठन, विश्व मैत्री आदि की संरक्षा के लिए तत्काल भाषांतरकार की उपादेयता स्वयं सिद्ध है।

2. सभाओं, सम्मेलनों आदि में त्वरित भाषान्तर :– कभी–कभी वक्ता एक होता है और श्रोता समुदाय विशाल होता है अर्थात् जब कोई विशिष्ट वक्ता किसी सभा या सम्मेलन को सम्बोधित करता है और सभा या सम्मेलनों में उपस्थित श्रोताओं की भाषा वक्ता की भाषा से भिन्न होती है तो वैसी स्थिति में दुभाषिया का काम और विचित्र हो जाता है क्योंकि उसे वक्ता के वक्तव्य को पूरे नाटकीय व्यापार के साथ तत्काल अनुवाद करना होता है। उसे वक्ता का लहज़ा, उसके वक्तव्य की शैली का भी अनुकरण करना होता है।

प्रायः जनसामान्य की सभाओं के साथ–साथ विशिष्ट सेमिनारों, सम्मेलनों में एक से अधिक वक्ताओं के वर्त्तव्यों के अनुवाद त्वरित भाषांतरकारों को करने होते हैं।

कभी–कभी दुभाषिया भिन्न–भिन्न प्रतिनिधियों के वक्तव्यों का तत्काल सारानुवाद भी करता है। सारानुवाद में भिन्न–भिन्न वक्ताओं के वक्तव्यों की मुख्य–मुख्य बातें ही भाषांतरित की जाती हैं। उनकी अभिव्यक्ति की शिल्प अथवा मुहावरेदार शैली छोड़ कर मात्र वक्तव्य के मुख्य बिन्दुओं का अनुवाद किया जाता है।

3. लिखित भाषण का तत्काल भाषांतरण :– दुभाषिया कार्य का एक रूप

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

यह भी है कि भाषांतरकार पूर्व में लिखे हुए प्रारूप को पढ़ कर के तुरंत मौखिक अनुवाद करे। कुछ व्याख्याकार, वक्ता सम्मेलनों अथवा सभाओं में अपना लिखित वक्तव्य पढ़ते हैं और उस लिखित वक्तव्य का प्रारूप भाषांतरकारों के पास पहले से होता है जैसे ही मूल वक्ता आलेख की एक–एक लाइन पढ़ता है उसके समानान्तर ही अनुवादक या दुभाषिया अनुवाद प्रस्तुत करता जाता है। इसमें आशु अनुवादक को सहूलियत हो जाती है क्योंकि लिखित वक्तव्य में मूलभाव, विचार और भाषा आसानी से समझी जाती है।बोलते हुए व्यक्ति की सभी बातें ठीक से संप्रेषित नहीं हो पातीं।

4. द्रुतगति से भाषांतरण :– दुभाषिया के लिए द्रुत गति से भाषांतरण करना सबसे बड़ी चुनौती होती है। कुछ वक्ता धाराप्रवाह बोलते हैं उनके भाषण का तत्काल अनुवाद कठिन होता है क्योंकि धारा–प्रवाह वक्तव्य में प्रयुक्त भाषा की सभी इकाइयों के लिए लक्ष्य भाषा में तुरंत समतुल्य शब्द जुटा पाना संभव नहीं होता। ऐसी स्थिति में मात्र मूलार्थ पर बल दिया जाता है और मूल वक्ता की भंगिमाओं और चेष्टाओं का अनुकरण करके बात 'समझाई' जाती है। वस्तुतः सही अर्थों में यही दुभाषिया कर्म है।

5. धीमी गति से आशु अनुवादः– कभी–कभी विशाल सम्मेलनों में कई भाषा–भाषी अन्तःक्रियाएँ करते है, तर्क–वितर्क करते हैं, सहभागिता करते हैं, ऐसी स्थिति में अलग–अलग वक्ताओं के साथ अलग–अलग दुभाषिया होते हैं। ये दुभाषिया अपने वक्ता को दूसरे वक्ताओं के आशय धीमी गति से धीमी आवाज़ में समझाते रहते हैं और बताते रहते हैं तथा सम्मेलन की कार्यवाही चलती रहती है। इस तरह दुभाषिया कर्म के कई रूप सामने आते हैं। हर रूप का महत्त्व है और समयानुसार उसका प्रयोग भी है।

इसके साथ ही आशु अनुवाद की आवश्यकता प्रीतिभोजों, पारिवारिक सह–सम्बन्धों और परिचयात्मक गोष्ठी में भी होती है। जब कभी कोई विदेशी व्यक्ति, विशिष्ट अतिथि आता है उसके सम्मान में भोज का आयोजन होता है अथवा उसे व्यक्तिगत स्तर पर भोजन पर आमंत्रित किया जाता है उस समय एकत्र विविध भाषा–भाषियों के मध्य वार्तालाप के प्रयोजन से आशु अनुवाद की आवश्यकता पड़ती है। इस वार्तालाप के दौरान आशु अनुवाद प्रायः धीमी गति से होता है। इस अनुवाद में व्याकरणिक कोटियों पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। इसका लक्ष्य मात्र अभीष्ट अर्थ का सम्प्रेषण होता है। समग्रतः आशु अनुवाद की कई कोटियाँ हो सकती हैं और उन सबका समय और स्थानानुसार प्रयोग किया जा सकता है।

द्रुत गति से तत्काल किया गया भाषान्तरण ही आशु अनुवाद के विविध रूपों में से सबसे विकसित एवं उन्नत रूप है। इसका उपयोग सभाओं में, सम्मेलनों में, सीनेट में, पार्लियामेन्ट आदि में होता है। विकसित तकनींक का इसमें सर्वाधिक उपयोग होता है। भाषान्तरकार अथवा भाषान्तरकारों की एक यूनिट आधुनिक उपकरणों से सज्जित एक काँच के कक्ष में बैठी रहती है और पूरे सभा कक्ष को तथा वक्ताओं और श्रोताओं को देखती–

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सुनती रहती है। भाषान्तरकार (दुभाषिया) हेडफोन अथवा ईयर फोन लगाये रहता है। वक्ता का वक्तव्य भाषान्तरित करके तुरन्त माइक्रोफोन से सभा भवन में बैठे सदस्यों तक पहुँचाता रहता है। उसे मूल वक्ता के साथ–साथ द्रुत गति से अनुवाद करना पड़ता है। वह वक्ता का वक्तव्य सुनता है और तुरन्त इस प्रकार अनुवाद करता है मानों स्वयं वक्तव्य दे रहा हो। स्पष्ट है कि व्याख्याकार के साथ अनुवाद करने में उसे कई समस्याओं का सामना करना होता है और उन समस्याओं का निदान और समाधान भी मशीनी गति से तुरन्त करना होता है। आशु अनुवाद की इस प्रक्रिया में कम्प्यूटर तकनीक का उपयोग भी अब हो रहा है।

अनुवाद और आशु अनुवाद का व्यावहारिक चरणः– अनूदन प्रक्रिया में पुनर्रचना, अनुवाद और आशु अनुवाद का व्यावहारिक चरण है। इस चरण में स्रोत भाषा की सामग्री के अर्थान्तरण के साथ ही साथ उसकी शैली पर भी विचार करना होता है। अनुवाद का मूल उद्देश्य स्रोत भाषा की सामग्री का अर्थ एवं शैली दोनों ही दृष्टियों से लक्ष्य भाषा में अंतरण करना है। इसलिए अनुवाद की शैली मूल रचना की शैली के निकट होनी चाहिए। उदाहरण के लिए चार्ल्स डिकन्स के उपन्यासों के अनुवाद की भाषा और शैली वही नहीं हो सकती, जो टी. एस. इलियट के निबंधों के अनुवाद की होगी। हिन्दी में 'प्रसाद' और प्रेमचन्द दोनों ने ही उपन्यास और कहानियाँ लिखी हैं, पर दोनों की शैली में समानता नहीं है। अच्छा अनुवादक यही प्रयत्न करेगा कि उक्त दोनों लेखकों की भाषा एवं शैली उनकी रचनाओं के अनुवाद में भी दिखाई दे। ठीक यही बात दुभाषिया प्रविधि में लागू होती है। यदि किसी वक्ता ने उदात्त एवं परिनिष्ठत भाषा का प्रयोग किया है तो वह उसके आशु अनुवाद में भी आनी चाहिए। दुभाषिया को मूल वक्ता की भाषा और शैली का पूरा ध्यान रखना चाहिए। यदि व्याख्याकार परिनिष्ठित और मुहावरेदार भाषा का प्रयोग कर रहा है तो अनुवादक को भी लक्ष्य भाषा के परिनिष्ठित और मुहावरेदार रूप का अनुप्रयोग करना चाहिए। यद्यपि दुभाषिया के पास इतना समय नहीं होता जितना अनुवादक के पास होता है तथापि परिनिष्ठित भाषा रूप और लोकोक्तियों और मुहावरों का उसे गंभीर ज्ञान होना चाहिए। आशु अनुवादक का गंभीर भाषा–ज्ञान ही एकमात्र उसका सहायक होता है जबकि साधारण अनुवादक के पास अन्यान्य साधन उपकरण भी होते हैं।

पुनर्रचना की प्रक्रियाः– पुनर्रचना की प्रक्रिया के मुख्यतः दो तत्त्व हैं–1. भाषिक उपादान तथा 2. वाक्य विन्यास। ये दोनों तत्त्व किसी रचना को वह 'व्यक्तित्व' प्रदान करते हैं, जिनकी वजह से उसकी शैली की अलग से पहचान बनती है। पहले तत्त्व के अंतर्गत शब्दों का चयन, भाषिक इकाइयों के रूप में उनका प्रयोग, पदबन्ध, मुहावरे आदि सम्मिलित हैं। दूसरे के अंतर्गत व्याकरणिक संरचना एवं भाषा की प्रकृति का समावेश होता है। मूल लेखन की तरह ही अनुवाद का सारा रचना विधान एवं साहित्यिक सौंदर्य इन्हीं पर निर्भर है। इसलिए अनुवाद करते समय इन दोनों पर उचित ध्यान देना आवश्यक है। यदि अनुवादक ने केवल शब्दों, पदबंधों आदि पर ही अधिक ध्यान दिया और वाक्य विन्यास

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

की उपेक्षा की तो उसका अनुवाद दुरूह और अटपटा हो जाएगा और अगर उसने वाक्य–विन्यास पर ही अपनी नज़र रखी और शब्दों आदि की उपेक्षा की, तो उसका अनुवाद भ्रामक हो जायेगा। आशु अनुवादक को भी यथासम्भव मूल वक्तव्य के शब्दों अथवा पदबंधों को अंतरित करने का उपक्रम करना चाहिए।

भाषिक उपादान–शब्द चयनः– भाषायी उपादान की दृष्टि से आशु अनुवादक को शब्द की आत्मा अर्थात् अर्थ पर ध्यान देना चाहिए। उसमें अभीष्ट अर्थ का सम्प्रेषण करने के लिए सटीक एवं उपयुक्त शब्द नितान्त आवश्यक हैं।

स्रोत भाषा के शब्दों के लिए लक्ष्य भाषा में उपयुक्त शब्दविधान की दृष्टि से निम्न उदाहरण उल्लेख्य हैः–

We should not overlook the promise that self–employment gives. इस वाक्य का भ्रामक अनुवाद होगा– "हमें वचन को अनदेखा नहीं करना चाहिए जो स्वतः रोज़गार से मिलते हैं।" इसमें 'promise' के लिए 'वचन' शब्द प्रयोग किया गया है जो ठीक नहीं है। यहाँ 'promise' शब्द का संबंध किसी वचन से नहीं है, सम्भावना से है। अतः अनुवाद होना चाहिए– "हमें उस सम्भावना को अनेदखा नहीं करना चाहिए जो स्वरोज़गार से उत्पन्न होती है।" वस्तुतः अनुवाद में गलत शब्द के चयन से मूलाशय गलत हो सकता है। जब हम 'आशु अनुवाद' के संदर्भ में 'पुनर्रचना' की बात करते हैं, तब हमारा मतलब अभिव्यक्ति की सहजता से होता है। अतः उपयुक्त शब्द चयन यहाँ महत्त्वपूर्ण है।

अर्थ की दृष्टि से अनुवादक और आशु अनुवादक के पास तीन तरह के शब्द उपलब्ध हो सकते हैं– 1. समतुल्य– जिनमें स्रोत भाषा के शब्दों से अर्थ की समानता हो, 2. अल्पार्थक– जिनमें अर्थ कम हो, अर्थात् ऐसे शब्द जिसमें मूल की तुलना में अर्थ का संकोच हो और 3. अत्यर्थक, जिनमें अर्थ अधिक हो, अर्थात् ऐसे शब्द, जिनमें अर्थ का विस्तार हो। जहाँ तक संभव हो, आशु अनुवादक को समतुल्य शब्दों का ही प्रयोग करना चाहिए। जहाँ ऐसे शब्द उपलब्ध न हों वहाँ दूसरे और तीसरे प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है। लेकिन जब ऐसे शब्द भी उपलब्ध न हों, तो उसे ऐसे शब्दों या भाषिक इकाइयों का प्रयोग करना चाहिए, जो मूल के भाव को अच्छी तरह व्यक्त कर सकते हों। इस सारी प्रविधि में दुभाषिया को स्रोत और लक्ष्य भाषाओं के गम्भीर और सूक्ष्म ज्ञान का ही सम्बल होता है।

इसी तरह पदबन्धों और शब्द–युग्मों का भाषान्तरण करते समय भी पदबन्ध बाकी की संरचनात्मक आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। अतः उनके सही अनुवाद का ध्यान रखना आवश्यक होता है। हिन्दी में अन्यान्य शब्द–युग्म पदबन्धों के रूप में प्रयुक्त होते हैं जैसे– इष्ट–मित्र, साज–सज्जा, आगे–पीछे, इधर–उधर, माल–सामान, आमने–सामने, अड़ोस–पड़ोस, आचार–विचार, चाल–चलन, बनाव–सिंगार आदि। इसी तरह अंग्रेजी में भी अनेक ऐसे शब्द–युग्म हैं, जो पदबन्धों के रूप में प्रयुक्त होते हैं जैसे– by and

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

large, fire and fury, might and main, short and sweet, time and again आदि। शब्द–युग्म सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं। एक ऐसे शब्द–युग्म, जिनमें एक ही या लगभग एक ही प्रकार के भाव को व्यक्त करने वाले शब्दों का प्रयोग होता है, जैसे, bag and baggage, forms and ceremonies, (to all) intents and purposes, null and void; over and above, well and good, save and except आदि।

दूसरे प्रकार के शब्द–युग्म वे हैं, जिनमें परस्पर विरोधी या भिन्न भावों को व्यक्त करने वाले शब्द होते हैं, जैसे friend and foe; more and less; now or never; rich and poor; rough and ready; rhyme and reason आदि। यदि हिन्दी में इस तरह के किसी पदबन्ध के जोड़ का कोई पदबन्ध उपलब्ध हो, तो उसी का प्रयोग करना चाहिए जैसे–

This is the question of life and death for him– यह उसके लिए जीवन और मरण का प्रश्न है।

He has seen several ups and downs in his life– उसने अपने जीवन में कई उतार–चढ़ाव देखे हैं। some people want to achieve the goal by any fair or foul means. कुछ लोग किसी भी अच्छे या बुरे उपाय से अपना लक्ष्य सिद्ध करना चाहते हैं अथवा कुछ लोग अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं।

लेकिन जब अंग्रेजी के किसी युग्म का समकक्ष युग्म हिन्दी में उपलब्ध न हो या उसके दोनों शब्दों द्वारा लगभग एक ही प्रकार का अर्थ व्यक्त होता हो, तो उनका अनुवाद एक या दो शब्दों में किया जा सकता है। उदाहरण के लिए–

I will act entirely according to your will and pleasure.
मैं (पूरी तरह) आपकी इच्छा के अनुसार कार्य करूँगा।

He arrived home safe and sound.
वह सुरक्षित घर पहुँच गया।

अंग्रेजी में 'प्रिपोजिशनों' का बड़ा महत्त्व है। उनका प्रयोग अंग्रेजी की एक प्रमुख विशेषता है। उसमें संज्ञा, विशेषण तथा क्रिया सूचक शब्दों के साथ भिन्न–भिन्न प्रकार के 'प्रिपोजिशनों' के प्रयोग से कई तरह के पदबंधों की रचना होती है, जैसे–

संज्ञा – attention to, comment on, connection with, faith in, objection to, reply to, request for, want of आदि।

विशेषण – afraid of, akin to, aware of, capable of, Committed to, dependent on, devoid of, faithful to, over come with, tired of आदि।

क्रिया – accuse of, ask for, bring up, comply with, give in, make up, run in to, send for, take up आदि।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अर्थ की दृष्टि से क्रिया पदीय पदबंधों का अपेक्षाकृत महत्त्व है। वास्तव में क्रिया के साथ भिन्न–भिन्न प्रकार के 'प्रिपोजिशन' लगाकर नई क्रियायें बना लेने की प्रणाली अंग्रेजी भाषा की एक ख़ासियत है। सर अर्नेस्ट गावर्स के शब्दों में– "The English language likes to tackle a preposition to a single verb and so to create a verb with a different meaning... This habit of inventing phrasal verbs has been the source of great enrichment of the language."[1]

उदाहरण के लिए look after, look for, look into, look on, look out, look over, आदि सभी पदबन्धों का अर्थ अलग–अलग है। हिन्दी में इसका अनुवाद करने के लिए हर जगह 'लुक' क्रिया का पर्याय 'देखना' से काम नहीं चल सकता। संदर्भ के अनुसार उसके लिए भिन्न–भिन्न क्रियाओं का प्रयोग करना जरूरी होगा। इसी प्रकार get at, get in, get into, get on, get out, get over, get up या give in, give out, give over, give up आदि के अनुवाद के लिए भी अलग–अलग क्रियाओं की जरूरत होगी।

चूँकि प्रत्येक क्रियापदीय पदबन्ध का अपना अलग अर्थ होता है, इसलिए उसके अर्थ की बारीकी संदर्भ को ध्यान में रखने से ही पकड़ में आ सकती है। उदाहरण के लिए – He took off his coat तथा The plane took off at 10 O'clock. इन दोनों वाक्यों में एक ही प्रकार के क्रियापदीय पदबन्ध का प्रयोग हुआ है, पर इनका अनुवाद अलग–अलग होगा– 'उसने अपना कोट उतारा तथा हवाई जहाज दस बजे रवाना हुआ।' इसी तरह – He got up at 6 O'clock तथा He got up to ask a question. इन वाक्यों का अनुवाद होगा– 'वह छह बजे उठा' तथा 'वह एक प्रश्न पूछने के लिए खड़ा हुआ।'

कई क्रियापदीय पदबन्ध क्रिया तथा क्रिया विशेषण के संयोग से भी बनते हैं, जैसे, break down, fight out, run short, set free, talk big आदि। इस तरह के पदबंधों का अनुवाद करते समय भी यह बात ध्यान में रखना आवश्यक है कि उनके द्वारा जिस भाव को व्यक्त किया गया है, उसे हिन्दी में किन शब्दों की सहायता से स्वाभाविक रूप में व्यक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए– My car has broken down. मेरी गाड़ी खराब हो गई है। The talks have broken down. वार्ता भंग हो गई है। He always talks big about himself. वह अपने बारे में हमेशा बड़ी–बड़ी बातें करता है। हमेशा ही खूब डींग हांकता रहता है। This rule holds good have also. यह नियम यहाँ भी लागू होता है। I hope you will steer clear of him. आशा है तुम उससे बचकर रहोगे। This news has come true. यह खबर सही निकली है।

प्रायः सभी भाषाओं में रूपकों का प्रयोग होता है। इनके प्रयोग से अभिव्यक्ति अधिक सजीव हो जाती है। उदाहरण के लिए – It flared up तथा He flared up इन दो वाक्यों को लें। पहले वाक्य में आग के संदर्भ में एक सामान्य कथन है, दूसरे वाक्य में रूपक है

1. The complete plain word.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

पहले का अनुवाद होगा– आग भड़क उठी। दूसरे का अनुवाद होगा– वह भड़क उठा।

रूपकात्मक प्रयोग प्रकृति से ही लाक्षणिक होते हैं, इसलिए उनका अनुवाद करने में भी अनुवादक को वही दृष्टिकोण अपनाना चाहिए, जो कि पदबन्धों या मुहावरों के अनुवाद में अपनाना उचित है, अर्थात् लक्ष्य भाषा में जहाँ समतुल्य अभिव्यक्तियाँ मिलें, वहाँ उनका प्रयोग करना चाहिए और जहाँ ऐसी अभिव्यक्तियाँ न मिलें, वहाँ संदर्भ के अनुसार उनका अनुवाद करना चाहिए; जैसे–

At last he fished out the letter. आखिरकार उसने पत्र ढूँढ़ ही निकाला।

He also Jumped into the fray. वह भी संघर्ष में कूद पड़ा। He dished out a good suggestion. उसने एक अच्छा सुझाव प्रस्तुत किया। They melted away in the crowd. वे भीड़ में गायब हो गये।

वस्तुतः आशु अनुवादक को रूपकात्मक प्रयोगों का गंभीर ज्ञान होना चाहिए तथा लक्ष्य भाषा और स्रोत भाषा की लोकोक्तियों और मुहावरों को कंठस्थ कर लेना चाहिए। इस दृष्टि से यह सूची उपादेय है–

Abandon all hope, to	– निराश हो जाना, सभी आशाएँ छोड़ बैठना।
Ab extra	– बाहर से, बाह्यतः।
Abide by	– का पालन करना, पर दृढ़ या अटल रहना, के प्रति निष्ठा रखना, पूरा करना।
Ab initio	– नये सिरे से, आरम्भ से, शुरू से, प्रारम्भ से।
Ab intra	– भीतर से, अन्दर से।
Above board	– बेलाग, खरा, सन्देह से परे।
Achilles' heel	– कमजोर स्थल, कमजोर प्वाइंट, रावण की नाभि।
Acquire momentum/ force to	– जोर बाँधना, जोर पकड़ना।
Act a lie, to	– चकमा देना
Act as a defence, to	– ढाल बनना, ढाल का काम करना, बचाना।
Act contrary to	– उलटी गंगा बहाना।
Customary practices, to	– चलन के उलटे करना।
Actions speak louder than words	– करनी कथनी से ताकतवर होती है, काम शब्दों से अधिक मुखर होते हैं।
Add a feather to one's cap, to	– सफल होना, नई उपलब्धि मिलना, प्रसिद्धि पाना।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Add fuel to the fire, to – जलती आग में घी/तेल डालना।
Add finem – अन्त तक, अन्त की ओर।
Add insult to injury, to – कटे/घाव/जले पर नमक छिड़कना।
Add lustre, to – चार चाँद लगाना।
Ad hoc – तदर्थ।
Ad infinetum – निरवधि।
Ad interim – आन्तरिक, अन्तःकालीन, अस्थायी।
Ad libitum – इच्छानुसार, यथेच्छ।
Ad modum – रीति के अनुसार, रीत्यनुसार।
Adversity flatters no man – विपत्ति में कोई साथ नहीं देता।
Adversity is touch stone of friendship – विपत्ति मित्र की परीक्षा है, दोस्त आफ़त में परखा जाता है।
Against the collar – थकाने वाला, कमरतोड़।
All foot tread not in one shoe – सभी को एक टोपी नहीं आती, पसन्द अपनी–अपनी स्वभाव अपना–अपना।
All is fair in love and war – लड़ाई में लिहाज़ कैसा, प्यार और लड़ाई में सब कुछ उचित है।
All is well that ends well – अन्त भला सो सब भला।
All roads lead to Rome – सभी सयाने एकमत।
All that glitters is not gold – चमकने वाली हर चीज सोना नहीं होती, सूरत से सीरत का अन्दाज नहीं होता,
As sharp as needle – कुशाग्रबुद्धि, तीक्ष्ण बुद्धि।
Astute fellow. – घाघ, चालाक, कपटी।
As you brew, so you will bake – जैसा करोगे, वैसा भरोगे।
As you sow so shall you reap – जैसा बोओगे वैसा काटोगे, जैसा करोगे वैसा पाओगे।
Ass in lion's skin – शेर की खाल में गदहा।
At loggerheads with – (में) अनबन, खूब ठनी होना।
At one's wit's end – हतबुद्धि। किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना।
At sea – भौचक्का, क्या करूँ क्या न करूँ किंकर्त्तव्यविमूढ़।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

At the back and call of – (के) इशारे पर।
At the eleventh hour – ऐन मौके पर, ऐन/आखिरी वक़्त पर।
At the end of one's units – रास्ता न रह जाना।
At the expense of – की कीमत पर, के मूल्य पर।
At the mercy of – रहम–व–करम पर, दया/कृपा पर।
At the top of the tree – व्यवसाय के शिखर पर, किसी काम धन्धे में सबसे ऊँचे स्थान पर/चोटी पर।
Babes and suckling – कल के छोकरे, दुधमुँहे बच्चे।
Back wrong horse, to – गलत मोहरे पर हाथ रखना, गलत चाल/दाँव चलना,
Bad blood – मन–मुटाव, मन में गाँठ पड़ना।
Bad egg/hat – शोहदा, लुच्चा, लफंगा, गुंडा।
Bad man in a bad company– एक तो करेला दूजे नीम चढ़ा।
Bad workman blames his tools– नाच न जाने आँगन टेढ़ा, जाने quarrels with his tools न बूझे कठौती से जूझे।
Bad news travels fast – अफ़वाहों के पंख होते हैं।
Bad penny always turns up – लौट के बुद्धू घर को आए।
Bad short, a – गलत अनुमान।
Ball of fortune, a – किस्मत (नियति) का खिलौना, किस्मत का मारा।
Barkers are no biters – जो भूँकते हैं, वे काटते नहीं, जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं।
Barking dogs seldom bite – जो गरजते हैं, वे बरसते नहीं, भूँकता कुत्ता काटता नहीं।
Be aroused from sleep, to – आँखें खुल जाना।
Be as lofty as the sky,–to – महान्, उच्चाशय, बहुत अच्छा होना।
Beat about the bush, to – इधर–उधर की हाँकना, घुमा–फिराकर बातें करना, असली पॉइंट पर न आना।
Be at a dead end, to – अंधी गली के मुहाने पर होना, आगे जाना सम्भव न होना।
Be at a dead lift, to – जान आफ़त में/ साँसत में होना।
Be at a deadlock, to – (किसी भी काम में/ दो के बीच)

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Beat bare, to	– चमड़ी उधेड़ना, मार–मार कर भुरकुस निकालना, बुरी तरह मारना, मार–मार कर लहू–लुहान कर देना।
Be at dagger's drawn, to	– पक्की दुश्मनी होना, एक दूसरे के जानी दुश्मन होना।
Be at sea, to	– भौचक्का होना, किंकर्त्तव्यविमूढ़ होना।
Be convinced, to	– (का) कायल होना।
Be cornered (in an argument), to	– (बहस में) जबान बंद होना, चुप हो जाना।
Be dammed, to	– जहन्नुम में जाना।
Be dead like a log, to	– गहरी नींद में होना, बेखबर होना।
Be disillusioned, to	– आँख खुलना, आँख का परदा उठना, असलियत का पता चलना।
Bed of roses	– फूलों की सेज़।
Be double–tongued, to	– जबान के नीचे जबान होना, मुँह पर कुछ कहना, पीठ पीछे कुछ कहना, यहाँ कुछ कहना, वहाँ कुछ कहना।
Beer and skittles	– खेल तमाशा, मौज़–मस्ती।
Beetle–brain, block–headed	– काठ का उल्लू, गोबरगणेश।
Beggar can't be chooser	– कंगाल/भिखारी के चुनाव का प्रश्न कहाँ? दान की बछिया के दाँत नहीं देखे जाते।
Be in a stalemate, to	– गतिरोध होना, ज़िच होना।
Be in bad humour, to	– खीझ भरी मनःस्थिति में होना, खीझा हुआ।
Be in bad books, to	– अप्रिय होना, नज़रों में गिरा होना।
Be in doldrums, to	– डावाँडोल हालत में होना।
Be in hot waters, to	– मुसीबत में होना।
Be in league with to	– (से) साठ–गाँठ होना।
be in the dumps, to	– बुझा–बुझा सा होना, तबियत बुझी–बुझी सी होना,
Be jugged, to	– जेल होना।
Be kept in abeyance, to	– खटाई में पड़ना, कुछ देर के लिए रुक जाना।
Bellowing cow soon forgets her calf, a	– शोक की अतिशयता शीघ्र ही समाप्त हो जाती है।
Bell the cat, to	– म्याउँ का मुँह पकड़ना, म्याउँ का ठौर पकड़ना, बिल्ली के गले में घंटी बाँधना।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Belly has no ears, the	–	बातों से पेट नहीं भरता, पेट के कान– नहीं होते, भूख कुछ नहीं सुनती।
Be out of one's mind, to	–	होशहवास खो बैठना, अक़्ल मारी जाना, पागल होना।
Big words	–	डींग, शेखी।
Blink the fact, to	–	सच्चाई से आँखें मूँदना, देखी अनदेखी, देखा–अनदेखा करना।
Blood and iron policy	–	शक्ति की नीति, तलवार के जोर से कुछ करने की नीति।
Blood for blood	–	खून का बदला खून।
Blood is thicker than water	–	पराया–पराया, अपना–अपना, पहले अपने, पीछे पराये।
Blood money	–	हत्या की झूठी गवाही के लिए दी गई रिश्वत।
Blow hot and cold, to	–	पल में तोला पल में माशा होना, दो तरह की बातें करना, जीभ के टाले जीभ होना, कभी नरम, कभी गरम होना।
Blow off steam, to	–	गुबार निकालना, भड़ास निकालना।
Blow one's own horn to	–	अपनी शेखी बघारना, अपनी डौंडी पीटना।
Blow one's own trumpet, to	–	अपनी खिचड़ी अलग पकाना, अपनी डेढ़/ ढाई ईंट की मस्जिद अलग बनाना।
Blows will answer blows	–	थप्पड़ का जवाब थप्पड़, जैसा बोओगे–वैसा काटोगे।
Blue collar worker, a	–	फैक्ट्री में काम करने वाला मजदूर।
Blue ribbon	–	सर्वोच्च सम्मान।
Blue stocking	–	साहित्य–प्रेमी महिला, साहित्य प्रेम का दिखावा करने वाली महिला।
Bone of Contention, a	–	झगड़े की जड़।
Breach of discipline	–	अनुशासन–भंग, अनुशासन तोड़ना।
Breach of faith	–	विश्वास–भंग।
Breach of promise	–	प्रतिज्ञा–भंग।
Breach of the peace	–	शांति–भंग।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Breach of trust – विश्वास–भंग।

Break the ice, to – चुप्पी तोड़ना, झिझक खोलना, बातचीत प्रारम्भ करना।

Bring to book, to – जवाब तलब करना।

Build castle in the air – ख्याली पुलाव पकाना, मन के लड्डू खाना/फोड़ना, जमीन–आसमान के कुलाबे मिलाना, हवाई किले बनाना।

By and by – धीरे–धीरे, एक–एक करके, क्रमशः।

By and large – सब मिलाकर, समवेततः।

By fits and starts – रुक–रुक कर, ठहर–ठहर कर।

By hook or by crook – किसी भी तरह से, येन केन प्रकारेण, जैसे भी हो।

By leaps and bounds – दिन दूना रात चौगुना, तेजी से बढ़ना।

Caesar is not above the grammarians – नियम तो राजा पर भी लागू होते हैं।

Calf never heard church bell, the – (क्योंकि वह सोमवार को पैदा हुआ और शनिवार के पूर्व उसे लोगों ने मार खाया) वह जिसने दुनिया नहीं देखी, अकाल कालकवलित, अकाल मृत्यु को प्राप्त।

Calf's teeth – दूध के दाँत।

Call a spade a spade, to – खरी–खरी कहना/सुनाना, दूध को दूध और पानी को पानी कहना, किसी बात को बिना लाग–लपेट के कहना।

Cap–a pie – सिर से पैर तक (लैस)

Capons were chickens, the – जो आज चूजे हैं कल मुर्गे होंगे।

Cassandra's warnings – भविष्य वाणी करने वाला, काली जबान वाला, बुरी बात की भविष्यवाणी करने वाला।

Castle in the air – हवाई किला, मन के लड्डू।

Cast pearls before swine, to – भैंस के आगे बीन बजाना, बंदर को अदरक का स्वाद बताना, अंधे के आगे रोना, अपने दीये खोना।

Charity begins at home – पहले अपने पीछे पराये, पहले आत्मा फिर परमात्मा, घर में दिया तो मस्जिद में दिया।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Chop–fallen – हतोत्साह, निराश, हताश, लुटा–पिटा।
Cold–blooded – 1. निर्दयी, क्रूर, निष्ठुर, 2. निर्दयतापूर्ण, क्रूरतापूर्ण।
Coloured statement – अतिशयोक्ति, अतिरंजित बात।
Cry in wilderness – नक्कारखाने में तूती की आवाज कौन सुनता है, अरण्यरोदन, ऐसी हाय–तोबा जिसे कोई न सुने।
Dance to the tune of – किसी के हाथ की कठपुतली होना, किसी के इशारों पर नाचना, किसी के ताल पर नाचना।
Dead pan – भावहीन चेहरा, बुत–सा चेहरा।
Deep rivers move with silent majesty– गंभीर व्यक्ति शांत होते हैं।
De facto – वस्तुतः, असल में, यथार्थतः।
De jure – 1. विधिवत्, कानूनन्, कानून से 2. कानूनी, विधिसम्मत।
Dog–fight – तू–तू मैं मैं, छीना–झपटी, आमने–सामने का युद्ध।
Double–minded – अनिश्चय की स्थिति, दोमुँहा, ऐसा व्यक्ति जो कभी कुछ कहे, कभी कुछ।
Drowning man will clutch at a straw – डूबते को तिनके का सहारा।
Early bird catches the worm, the – पहले मारे सो मीर।
Ear kissing – फुसफुसाहट।
Empty vessels make the most sound – थोथा चना बाजे घना।
Err is human, to – इंसान गलती करता है, इंसान गलती का पुतला है।
Eye for an eye – अदले का बदला, आँख के बदले आँख, जान के बदले जान,
Fact is stranger than fiction– सच्चाई कल्पना से कहीं अधिक अजीब होती है।
Fair dealing – ईमान का सौदा, निष्कपट व्यवहार।
Fishy affair – दाल में काला, गड़बड़ मामला, गड़बड़झाला।
Fix one's tether, to – खूँटा गाड़ना, सीमा बाँधना, हदबंदी करना।
Flare up, to – आग बबूला हो जाना।
Flas in the pan – टाँय टाँय फिस।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Flee love and it will follow thee – प्रेम के पीछे भागो तो वह तुम से दूर भागेगा। उससे तुम भागोगे तो वह तुम्हारे पीछे भागेगा।

Fool's paradise – मूर्खों का स्वर्ग, ख़्याली पुलाव, निराधार आशा, महज दिल का बहलाव।

Fools rush in where angels fear to tread– – बुद्धिमान दस बार सोच–समझकर जिस काम को करेंगे मूर्ख उसमें बिना सोचे–समझे कूद पड़ेंगे।

Forlorn hope, a – हारे हुए जुआरी का दाँव/चाल।

Fretting and fuming – जला–भुना।

Friends are plenty – धनी के हैं सब यार।

From stem to stern – सिर से पैर तक, ऊपर से नीचे तक।

Get the upper hand to – 1. विजय पाना, 2. छा जाना, इक्कीस पड़ना, 3. माहिर/उस्ताद होना।

Get the wind up, to – दम खुश्क होना, भयभीत होना, प्राण सूखना।

Give a flat answer, to – कोरा जवाब देना, साफ मना कर देना।

God helps those who help themselves – हिम्मते मरदाँ मददे खुदा, लगन लगे का साथी राम, भगवान उनकी मदद करता है, जिनमें हिम्मत होती है।

Good swimmers are often drowned – तैराक ही प्रायः डूबते हैं।

Good wine needs no bush – अच्छी चीज खुद बोलती है।

Grassroot politics – समाज के मूल मुद्दों की राजनीति।

Have too many irons in the fire– 1. कई धन्धों में हाथ होना, 2. तरकश में कई तीर होना, 3. कई जगह टाँग फँसी होना।

Health is wealth – स्वास्थ्य ही सबसे बड़ा धन है, तंदुरुस्ती हजार नियामत।

Heart and soul – दिलोजान से, जी जान से।

Hen–pecked husband – जोरू का गुलाम (पति)।

Herculean effort/labour – भगीरथ प्रयत्न/ प्रयास।

Hobson's choice – (जिसमें वस्तुतः च्वॉयस न हो, एक चुनो तो बुरा दूसरे को चुनो तो बुरा) खाओ तो ठेंगे से न खाओ तो ठेंगे से, खाओ तो बैंगन से न खाओ तो बैंगन से, लेना है लो नहीं तो रास्ता नापो।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Hog in armour – राजा भोज की पोशाक में गंगू तेली।

Hog–shearing – बात का बतंगड़ (बना देना), खामखाह चिल्लपों मचाना।

Hungry man is an angry man, a– भूखा सो रूखा।

Hurry spoils curry – जल्दी में सदा हानि होती है।

If wishes were horses beggars might ride – यदि चाहने से ही सब कुछ मिल जाये तो कोई मुहताज न रहे।

In a word – संक्षेप में, थोड़े में।

In black and white – लिखित रूप में, पक्के करार की शक्ल में।

In high feather – 1. मस्त, उल्लसित, प्रफुल्लित, प्रसन्न, 2. प्रसन्न मन से, 3. तरंग में।

In low water – हताश, मायूस, खस्ता हाल, ठन ठन गोपाल, पतली हालत में।

Knuckle down, to – घुटने टेक देना, हार मान लेना।

Lame duck, a – 1. (लंगड़ी बतख) परिवार में सबसे कमजोर (स्वास्थ्य, पढ़ाई आदि में) बच्चा। 2. ऐसा व्यवसाय जो आर्थिक कारणों से नीचे जा रहा हो, गिरता धन्धा।

Left hand compliment – धूर्तता भरी तारीफ, मीठी चोट, मीठी मार दुशाले में लपेटकर (जूता) लगाना।

Left handed oath – झूठी कसम।

Love at first sight – पहली नज़र का प्यार।

Love begets love – प्रेम से ही प्रेम होता है।

Mammon has more worshippers than God – धन ईश्वर से भी बढ़कर है, कुबेर को लोग भगवान से ज़्यादा पूजते हैं।

Man proposes, God disposes – आदमी करता/ सोचता कुछ है, भगवान कर कुछ देता है

Not worth a whoop – बिलकुल बेकार, निकम्मा, व्यर्थ का, निरर्थक।

Out of question – असंभव, नामुमकिन, प्रश्न नहीं उठता, सवाल नहीं पैदा होता।

Out of the frying pan into fire – आसमान से गिरा खजूर पर अटका।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

penny wise pound foolish	–	गँवार ईख न दे भेली दे, अशर्फियों की लूट कोयलों पर मुहर, पैसे पर मुहर रुपयों की लूट।
Play one's last trump	–	आखिरी दाँव चलने के लिए मजबूर हो जाना,
Pyrrhic victory	–	महँगी विजय, वह जीत जो बहुत महँगी पड़े।
Queen's weather	–	खुला/ साफ मौसम, खुला आसमान।
Ready mouth for a ripe cherry	–	पके आम पर सभी टूटते हैं, आसानी से उपलब्ध चीज को लेने के लिए हर आदमी तैयार रहता है।
Rome was not built in a day	–	बड़े काम एक–दो दिन में नहीं हो जाते, हथेली पर सरसों नहीं उगाई जा सकती , आज का थापा आज ही नहीं जलता।
Ropes of sand	–	1. रेत की दीवार, बालू की भीत, 2. झूठा सहारा।
Rough–neck	–	दंगई, हुल्लड़बाज।
Rough someone up the wrong way, to	–	1. खिझाना, चिढ़ाना, 2. ताव दिलाना।
Round the clock	–	चौबीसों घंटे, दिन–रात, आठों पहर, हर वक्त
Royal road	–	आसान तरीका, सीधा रास्ता।
Rubber neck	–	झँकरसिया, ताक–झाँक करने वाला।
Swing of the pendulum to	–	(राजनीतिक) उतार चढ़ाव।
Sword of Damocles	–	निरन्तर खतरा, सिर पर लटकती तलवार।
Tag Rag and Bobtail	–	ऐरा गैरा नत्थू खैरा।
Trojan horse	–	छिपा खतरा, धोखे की टट्टी, पूतना का दूध
True to one's salt	–	नमकहलाल, स्वामिभक्त।
Trump card	–	तुरुप का पत्ता।
Truth is stanger than fiction	–	सच्चाई कल्पना से कहीं अधिक अजीब होती है।
Turkey cock	–	अकड़बाज, आडम्बरी, अकड़ू।
Turn a deaf ear, to	–	कान न देना, कान पर जूँ तक न रेंगना, कान में तेल डाले बैठे रहना, सुनी–अनसुनी करना, कान में रुई डाल कर बैठना, कान बंद/बहरे कर लेना।
Under the umbrella of	–	(की) छत्रछाया में।
Union is strength	–	एक और एक ग्यारह होते हैं, एका में बहुत शक्ति होती है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Unity in diversity – विभिन्नता में एकता।
Ups and downs of something, the– 1. उतार–चढ़ाव, 2. सुख–दुःख।
Up to date – अद्यतन, आधुनिक।
Valvet paw of cat – शराफत की आड़ में जुल्म, नरमी की ओट में अत्याचार।
Vanish into thin air, to – (हवा में) गायव हो जाना।
Vested interest, a – निहित स्वार्थ।
Vexed question, a – अनुत्तरित प्रश्न।
Vicious circle, a – दुष्चक्र।
Wages of sin is death, the – गुनाह का अंजाम मौत है।
Wash dirty linen in public, to– परिवार के झगड़ों की चर्चा बाजार में करना, परिवार का झगड़ा/बखेड़ा सबके सामने ला देना।
Wash something out, to – बर्बाद करना, खेल बिगाड़ना।
Way of the world – जग की रीति
Well to do – खुशहाल, खाता–पीता।
When (you are) in Rome do as the Romans do – जैसा देस वैसा भेस।
Wise as Solomn, as – बृहस्पति की तरह बुद्धिमान।
Yeath and nay – कभी हाँ कभी नहीं, टाल–मटोल करना, अगर–मगर करना।
Yellow journalism – पीत पत्रकारिता।
Yeoman's service – वक्त पर मदद, गाढ़े में सहायता।
Zero hour – (किसी महत्त्वपूर्ण घटना जैसे रॉकेट का छोड़ना या नाभकीय परीक्षण आदि से पहले का समय) शून्य काल संसद में बैठक शुरू होने के पहले।
Zero period – शैक्षणिक संस्थानों में कक्षा शुरू होने से पहले ली गई कक्षा।

वस्तुतः विशिष्ट पदबंध तथा लोकोत्तियाँ और मुहावरे आशु अनुवाद या दुभाषिया का काम करने वाले को कंठस्थ होने चाहिए। इसके साथ ही आशु अनुवादक को समंजन की तकनीक भी आनी चाहिए। समंजन से तात्पर्य है मूल वक्ता के वक्तव्य में काट छाँट और जोड़ना घटाना। अर्थ के स्तर पर क्या जोड़ा–घटाया जाय जिससे मूलार्थ में कोई अन्तर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

न आये और दुभाषिया के कथन से श्रोता प्रभावित हो सके । वाक्य रचना में आवश्यकता के अनुसार जोड़ने की जरूरत हो सकती है। प्रभाव उत्पन्न करने के लिए शब्दों की पुनरुक्ति की जा सकती है। ऐसा करने से कथन में स्वाभाविकता आ जाती है। जैसे – Every body knows the name of Mahatma Gandhi. He has many good books in his library; while reading, he fell asleep. इन वाक्यों के अनुवाद में everybody, good तथा reading के लिए क्रमशः बच्चा–बच्चा, अच्छी–अच्छी तथा पढ़ते–पढ़ते का प्रयोग किया जा सकता है, जो व्याकरण की दृष्टि से ठीक ही नहीं, भाषा की प्रकृति के अनुकूल भी है, जैसे– बच्चा–बच्चा महात्मा गांधी का नाम जानता है, उसके पुस्तकालय में बहुत सी अच्छी–अच्छी पुस्तकें हैं। पढ़ते–पढ़ते वह सो गया। बहुवचन संज्ञाओं के साथ विशेषणों की पुनरुक्ति करना तो हिन्दी की प्रकृति ही है, जैसे छोटे–छोटे कमरे, बड़े–बड़े मकान, लम्बे–लम्बे भाषण आदि।

आशु अनुवाद में बहुत से शब्द छोड़ने भी पड़ते हैं, जिसके प्रायः दो कारण होते हैं:– व्याकरणिक आवश्यकता तथा मूल में फालतू शब्दों का प्रयोग। उदाहरण के लिए– The additional rent involved will be Rs. 150/– इस वाक्य में 'involved' शब्द का अनुवाद छोड़ा जा सकता है। इसी तरह – He will rather not do it या I can't afford to neglect my work. इन वाक्यों में 'rather' तथा 'afford' को छोड़ा जा सकता है। कभी–कभी One, character, nature आदि का प्रयोग भी अतिरिक्त रूप से होता है, जैसे, The problem is not an easy one: The weather will be of a showery character; The accident was caused through the dangerous nature of the road– इस तरह के वाक्यों को "The problem is not easy; The weather will be showery या It will be showery. The accident happened because the road was dangerous मानकर ही उनका अनुवाद करना चाहिए।

वास्तव में कहाँ जोड़ना या कहाँ घटना है? इसका पता वाक्य के स्तर पर समंजन करने में ही चलता है। इसीलिए परिवर्तन भाषिक इकाइयों के शब्द क्रम तथा वाक्य रचना के स्तर पर किया जाता है।

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि आशु अनुवाद और अनुवाद दोनों में ही समंजन की आवश्यकता होती है। अंतर इतना है कि आशु अनुवादक को यह कार्य पलक झपकाते करना होता है। अतः उसे स्रोत और लक्ष्य भाषाओं की समंजन–तकनीक का गंभीर ज्ञान होना चाहिए और दोनों भाषाओं की संरचनात्मक विशेषताओं से भलीभाँति परिचित होना चाहिए।

तत्काल भाषान्तरण की प्रक्रिया में मूल वक्ता के अभिप्रेत अर्थ को समझना, उसका त्वरित गति से अनुवाद करना और त्वरित अनुवाद में वक्ता की श्रेष्ठ भंगिमाओं का अभिप्रयोग करना अर्थात् बोलने के तरीके को प्रभावशाली बनाना।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

मूल वक्ता के व्याख्यान का अभिप्रेत अर्थः– तत्काल–भाषान्तरण में दुभाषिया को सबसे पहले वक्ता के वक्तव्य के अभिप्रेत अर्थ को समझना होता है, उसके लिए आवश्यक है कि वह वक्ता के भाषण को ठीक तरह से सुने और समझे। इस काम में उसके लिए आवश्यक है कि उसे स्रोत भाषा का गंभीर ज्ञान हो, वह वक्ता की संस्कृति से तथा उस भाषा की विशेषताओं और उसके उच्चारण से भी परिचित हो और उसका सामान्य ज्ञान व्यापक हो।

त्वरित भाषान्तरणः– सुनने के साथ–साथ भाषान्तरकार मन ही मन सुने हुए वाक्य का अनुवाद करता चलता है। भाषान्तरकार के काम का तात्कालिक और अनिवार्य उद्देश्य अपने श्रोताओं तक यह पहुँचाना है कि मूल भाषण करने वाला व्यक्ति क्या कहना चाहता है। मूल भाषणकर्ता जो प्रभाव डालना चाहता है उसी को श्रोताओं तक पहुँचाना भाषान्तरकार का काम है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए शाब्दिक अनुवाद न तो पर्याप्त है और न वांछनीय। सच तो यह है कि शाब्दिक अनुवाद करना ही नहीं चाहिए। प्रत्येक विचार को वैसे ही व्यक्त करना चाहिए जैसे कि लोग भाषणों में करते हैं। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्रसंघ के भूतपूर्व मुख्य भाषान्तरकार, मिस्टर जे. हरबर्ट का उद्धरण देना प्रासंगिक होगा। उन्होंने लिखा हैः–

"एक बात जो प्रत्येक भाषान्तरकार और प्रत्येक अनुवादक को याद रखनी चाहिए, वह यह है कि बहुत से वाक्यांश अनुवाद के बाद दूसरी भाषा में उतने सशक्त या सजीव नहीं रहते जितने कि मूल भाषा में होते हैं। भाषान्तरकार को चाहिए कि उस कमी को पूरा करने के लिए अधिक मुहावरेदार और सजीव भाषा का प्रयोग करे। इस उद्देश्य के लिए उसके पास ऐसे लच्छेदार शब्दों और सजीव वाक्यांशों का भंडार होना चाहिए जिनके ठीक–ठीक पर्याय उस भाषा में नहीं हैं और जिसका प्रयोग भाषणकर्त्ता ने किया है।"

दुभाषिए की अभिव्यक्ति और वक्तव्य शक्तिः– चूँकि दुभाषिए को मूल वक्ता के समानान्तर अनूदित वक्तव्य देना होता है अतः आवश्यक है कि दुभाषिया की वाणी न केवल सशक्त हो वरन् मधुर भी हो। उसका उच्चारण यथासंभव निर्दोष होना चाहिए। उसकी वाणी नीरस होगी तो भाषण में कोई रुचि नहीं लेगा। उसे एक अच्छे भाषणकर्ता के समान अपने श्रोताओं के दिल को छू लेना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि उसकी शैली तो वही होगी जो मूल भाषणकर्ता की है क्योंकि यदि भाषण देने वाला लच्छेदार शब्दों का प्रयोग कर रहा हो तो उसका अनुवाद भी वैसी ही सुन्दर और सजीव भाषा में होना चाहिए। लेकिन यदि भाषण करने वाले ने भोंडी और असभ्य भाषा का प्रयोग किया हो तो भाषान्तरकार की भाषा भी वैसी ही हो जाएगी। यहाँ एक बात का उल्लेख कर देना आवश्यक है। कई लोग यह सोचते हैं कि मूल भाषणकर्ता ने बोलते–बोलते तनिक क्रोध में आकर कोई अशोभनीय बात कह दी हो तो भाषा की सुन्दरता या उसके सौष्ठव को बनाए रखने के लिए यह आवश्यक है कि उस अशोभन बात की कटुता दूर करने के लिए तनिक हल्के शब्दों का प्रयोग किया

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

जाये। लेकिन ऐसा सोचना गलत है क्योंकि यदि भाषान्तरकार मूल भाषण की कटुता को कम कर देता है तो श्रोताओं को उसकी कार्यकुशलता में सन्देह हो जाएगा।

इस संदर्भ में एक घटना उल्लेखनीय है। एक बार रूस के भूतपूर्व प्रधानमंत्री ख्रुश्चेव अमरीका गये। एक भाषण में उन्हें क्रोध आ गया और उन्होंने अपने श्रोताओं को "बदमाश पूँजीवाद" (capitalist bastards) कह दिया। भाषान्तरकार ने सोचा कि यदि वह उन शब्दों का ठीक–ठीक अनुवाद कर देता है तो श्रोताओं के मन को ठेस लगेगी। इसलिए उसने बदमाश के स्थान पर "लफंगे" (rifraff) शब्द का प्रयोग कर दिया। लेकिन वह भूल गया था कि ख्रुश्चेव भी अंग्रेजी जानते हैं। ख्रुश्चेव ने भाषान्तरकार को टोकते हुए कहा, "नहीं, मैंने "बदमाश कहा है, लफंगे नहीं (Bastards and not rifraff)।

जब कोई भाषणकर्ता अपमानजनक शब्दों का प्रयोग करता है तो इस बात को नहीं भूलना चाहिए कि वह जानबूझकर ऐसा कर रहा है। भाषान्तरकार को अपने ऊपर यह जिम्मेदारी नहीं लेनी चाहिए कि वह उन शब्दों की कटुता को अनुवाद में कम कर दे। यह नहीं भूलना चाहिए कि भाषणकर्ता ने अपने श्रोताओं का अपमान करने के लिए उन शब्दों का प्रयोग किया है। अपमान की यह भावना भाषान्तरकार के शब्दों में भी प्रकट होनी चाहिए।

दुभाषिए के साधन–उपकरणः– दुभाषिया को कुछ साधनों की आवश्यकता पड़ती है जैसे कक्ष, माइक्रोफोन, हेडफोन तथा विषय से सम्बन्धित सामग्री आदि परन्तु कभी–कभी दुभाषिया के पास कोई साधन–उपकरण नहीं होता। उसे बिना किसी उपकरण के भी भाषान्तरण करना होता है। सामान्यतः सभा भवनों में तत्काल भाषान्तरण की व्यवस्था के लिए कुछ उपकरण लगाये जाते हैं–जैसे–

काँच का केबिनः– सभा भवन के एक कोने में छोटा–सा कक्ष बनाया जाता है जिसकी दीवारें काँच की होती हैं। उनमें से दुभाषिया सारे भवन को देख सकता है। जितनी भाषाओं में भाषान्तरण होना हो उतने ही कक्ष आवश्यक होते हैं। भाषान्तरकार हेडफोन के माध्यम से सुनते हैं और जब वह बोलते हैं, तो उनकी आवाज़ माइक्रोफोन से सभा भवन तक पहुँचती है। सभा भवन में सदस्यों के लिए हेडफोन लगे रहते हैं जिनसे वे भाषान्तरण सुन सकते हैं।

माइक्रोफोन और हेडफोनः– अधिकतर सभा भवनों में माइक्रोफोन और हेडफोन लगे रहते हैं। सदस्यों की आवाज़ माइक्रोफोन से कक्ष में बैठे भाषान्तरकारों के हेडफोन तक पहुँचती है। सदस्यों की सीटों पर भी हेडफोन लगे रहते हैं जिनसे वे भाषान्तरण सुन सकते हैं। सदस्यों की मेज़ों पर जो उपकरण लगा होता है उसमें दो स्विच होते हैं। एक को घुमाकर वे उस भाषा का चुनाव कर सकते हैं जो उन्हें सुननी हो और दूसरी को घुमाकर आवाज को अधिक तेज या मद्धिम कर सकते हैं।

विचाराधीन विषय से संबंधित सामग्रीः– भाषान्तरकार को एक और चीज की आवश्यकता होती है और वह है सभा के विचाराधीन विषय से संबंधित सामग्री, जो किसी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

बैठक में भाग लेने वाले सदस्यों को दी जाती है। उस सामग्री के अध्ययन से ही भाषान्तरकार इस विषय से परिचित हो सकता है, जिस पर सभा में विचार होना हो। संसद में पूछे जाने वाले प्रश्न, विधेयक, सरकारी नीति सम्वन्धी पत्र और वजट के कागज़ आदि भाषान्तरकारों को पहले से दे दिए जाते हैं। जब तक भाषान्तरकारों ने उस सामग्री का अध्ययन न किया हो और यह न सोचा हो कि कौन–कौन से विषय उठ सकते हैं, तब तक वे अपना काम ठीक ढंग से नहीं कर पायेंगे। अच्छे भाषान्तरकार की निशानी यह है कि वह किसी पत्र को पढ़ेगा, उसके महत्त्वपूर्ण अंशों के नीचे निशान लगा लेगा, कठिन शब्दों और वाक्यांशों के पर्याय ढूँढ़ लेगा और यह अनुमान लगाने की कोशिश करेगा कि कौन–कौन से प्रश्न पूछे जा सकते हैं।

भारत में भाषान्तरण का इतिहास अधिक लम्बा नहीं है। यह सितम्बर, 1964 में संसद के दोनों सदनों में प्रारम्भ हुआ। 1962 के बाद संसद में बहुत से ऐसे सदस्य आ गए थे जो हिन्दी के अतिरिक्त और किसी भाषा में बोलना या उसे सुनना पसन्द नहीं करते थे। इस कारण हिन्दी और अंग्रेजी भाषा–भाषियों में परस्पर टकराहट होती रहती थी। जब कोई मंत्री अंग्रेजी में बोलता तो कोई हिन्दी प्रेमी सदस्य उठकर अध्यक्ष से कहता था, "अध्यक्ष जी, जरा हिन्दी में समझा दीजिए कि मंत्री महोदय क्या कह रहे हैं या बोल गए हैं।" ऐसे मंत्रियों को और भी अधिक कठिनाई होती थी जो हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाएँ जानते थे, क्योंकि हिन्दी प्रेमी कहते थे कि मंत्री हिन्दी में बोलें और अहिन्दी भाषी चाहते थे कि मंत्री अंग्रेजी में ही बोलें। इस परिस्थिति को देखते हुए दोनों सदनों के अध्यक्षों ने यह निर्णय किया कि भाषान्तरण की व्यवस्था की जाए। तत्कालीन प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू समझते थे कि शायद भारत में ऐसी व्यवस्था का विकास नहीं हो पाएगा। दोनों सदनों के लगभग बीस कर्मचारी, जो अनुवाद में प्रवीण थे, आगे आए और उन्होंने बिना किसी बाहरी सहायता के अपने आप को तत्काल भाषान्तरण का प्रशिक्षण दिया। सितम्बर, 1964 से दोनों सदनों में तत्काल भाषान्तरण प्रारम्भ हो गया। उल्लेखनीय बात यह है कि भाषान्तरकारों ने बाहर के किसी भी संगठन की सहायता नहीं ली और स्वयं ही प्रशिक्षण की विधियों का विकास किया। अनुभव से यह प्रमाणित हो गया कि ये विधियाँ ठीक थीं। वस्तुतः सवसे महत्त्वपूर्ण उपकरण दुभाषिया स्वयं होता है।

तत्काल भाषान्तरकार या दुभाषिया भाषान्तरण व्यवस्था की नींव है। उसके अभाव में अन्य सारे उपकरण व्यर्थ हैं। भाषान्तरकार दो भाषाओं के बोलने वालों की बीच की कड़ी है। उसका उद्देश्य यह है कि वे दोनों भिन्न भाषा भाषी एक–दूसरे की बात समझ सकें। तत्काल भाषान्तरकार की भूमिका अनन्य होती है।

सामान्यतः यह समझा जाता है कि जो व्यक्ति आशु अनुवादक या तत्काल भाषान्तरकार बनना चाहता है उसके लिए दो भाषाओं का ज्ञान ही पर्याप्त है। इसमें संदेह नहीं कि दोनों भाषाओं का ज्ञान अनिवार्य है, लेकिन भाषान्तरकार बनने के लिए इतना ही काफ़ी

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

नहीं है। जिस प्रकार मुक्केबाज़ को दो हाथों की आवश्यकता होती है ठीक उसी प्रकार भाषान्तरकार को दो भाषाओं का ज्ञान होना जरूरी है। जैसे केवल दो हाथ होने से ही कोई व्यक्ति मुक्केबाज नहीं बनता, उसी प्रकार दो भाषाओं का ज्ञान ही किसी को भाषान्तरकार बनने के लिए काफी नहीं है। जिस प्रकार मुक्केबाज को इस बात का प्रशिक्षण प्राप्त करना पड़ता है कि अपने हाथों का प्रयोग कैसे करे उसी प्रकार भाषान्तरकार को यह पता होना चाहिए कि भाषणकर्ता ने जो विचार व्यक्त किये हैं उन्हें किस प्रकार दूसरी भाषा में रखा जा सकता है ताकि मूल भाषण को भलीभाँति सुन सके। मि. हरबर्ट का कहना है कि भाषान्तरकार में यह गुण होना चाहिए कि वह भाषण करने वाले की बात को पूरी तरह सुन और समझ सके। दूसरे शब्दों में उसकी प्रतिक्रिया बिजली के समान तेज होनी चाहिए। उसे भाषण के शब्दों के निहितार्थों का सम्पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है।

एक विशेषज्ञ का कहना है कि भाषान्तर करना टेनिस खेलने के समान है और जब तक भाषान्तरकार प्रत्युत्पन्नमति नहीं होगा, वह अपना काम ठीक से नहीं कर पाएगा। जिस प्रकार टेनिस का खिलाड़ी यह अनुमान लगा लेता है कि उसके विरोधी द्वारा फेंकी गई गेंद कहाँ पर गिर रही है, उसी प्रकार अच्छा भाषान्तरकार पहले से जान लेता है कि वक्ता किस ओर जा रहा है। कई बार उसे पता होता है कि वक्ता का अगला वाक्य कौन–सा होगा और वह उसका अनुवाद तैयार रखता है। इस प्रकार पहले से अनुमान लगा सकने की सामर्थ्य कुशल भाषान्तरकार की पहचान है।

अच्छे भाषान्तरकार की स्मरण शक्ति भी बहुत अच्छी होनी चाहिए। जिन लोगों की स्मरण शक्ति छलनी के समान है, उन्हें भाषान्तरकार का पेशा नहीं अपनाना चाहिए। भाषान्तरकार को दोनों भाषाओं का पूरा अधिकार होना चाहिए और आँख पलक झपकते उसे उचित शब्द, वाक्यांश या मुहावरा सूझ जाना चाहिए। उसमें यह भी गुण होना चाहिए कि वह वाद–विवाद की दिशा को समझ सके और आँकड़े तथा तथ्य याद रख सके। यह बात विधान मंडलों में काम करने वाले भाषान्तरकारों पर विशेष रूप से लागू होती है, क्योंकि विधान सभाओं के सदस्य अपने से पहले के वक्ताओं की दलीलों का उत्तर देते हैं और जब तक भाषान्तरकार को यह याद न रहे कि किस वक्ता के भाषण की ओर इशारा किया जा रहा है, उसने क्या कहा था, तब तक वह अपना काम ठीक ढंग से नहीं कर पाएगा।

भाषान्तरकार का सामान्य ज्ञान बहुत विस्तृत होना चाहिए। यह बात अनुवादकों पर भी उतनी ही लागू होती है लेकिन उनके मामले में उतनी आवश्यक नहीं जितनी कि भाषान्तरकारों के मामले में है। भाषान्तरकार को "हरफन मौला" होना चाहिए। यही एक गुण है जो अच्छे और एक साधारण भाषान्तरकार के बीच की एक सीमा रेखा है। भाषान्तरकार के ज्ञान का भंडार जितना अधिक होगा, उतना ही सुचारु रूप से वह अपना काम कर सकेगा। विधान मंडलों में सदस्य बिना पहले से बताए कोई भी विषय उठा देते हैं और उनके भाषणों का भापान्तर तभी किया जा सकता है जब भाषान्तकार के ज्ञान का भंडार बहुत अधिक हो।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषान्तरकार को एक अच्छा वक्ता होना चाहिए। उसे पता होना चाहिए कि अपनी बात किस प्रकार श्रोता तक पहुँचानी है। यदि उसमें अच्छे वक्ता का गुण नहीं होगा तो वह अच्छा भाषान्तरकार नहीं हो सकता, केवल कामचलाऊ भाषान्तरकार होगा।

भाषान्तरकार को ऐसा स्थितप्रज्ञ होना चाहिए कि वह किसी भी वात को सुनकर अपना मानसिक संतुलन न खो बैठे। यदि कोई वक्ता अचानक ऐसी वात कहने लगे जो विषय–सूची में नहीं है तो भाषान्तरकार को घबराना नहीं चाहिए। उसे बड़े संयत स्वभाव का और प्रत्युत्पन्नमति होना चाहिए जिससे तुरन्त उचित पर्याय सूझ जाए। यह बात इसलिए और भी आवश्यक है कि वह अकेला होता है। उसके पास न तो कोई शब्दकोश देखने का समय होता है और न अपने किसी मित्र से पूछने का। इसलिए उसे चलता–फिरता शब्दकोश होना चाहिए। वस्तुतः अनुवाद और तत्काल भाषान्तरण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। अन्तर मात्र इतना है कि एक अर्थात् तत्काल भाषान्तरणकार अनुवाद का एक स्वतः पूर्ण आयाम है, जबकि अनुवाद शब्दकोश, पारिभाषिक कोश आदि उपकरणों पर आश्रित आयाम है। कुछ लोगों की धारणा है कि अच्छा दुभाषिया अच्छा अनुवादक नहीं हो सकता परन्तु सत्य इससे भिन्न है। और वह है कि अनुवाद और दुभाषिया–कर्म एक दूसरे के पूरक हैं। तत्काल–भाषान्तरण में वक्ता के भाषण प्रारम्भ करते ही भाषान्तरण मन में शुरू हो जाता है। वह व्याकरण के चक्कर में उतना नहीं पड़ता जितना मूल मंतव्य के प्रस्तुतीकरण के चक्कर में पड़ता है। तत्काल–भाषान्तरण स्रोत भाषा की संरचना और उसकी आर्थी अभिव्यक्ति पर विशेष रूप से निर्भर करता है। अंग्रेजी से हिन्दी का दुभाषिया–कर्म अपेक्षाकृत सरल नहीं जटिल है क्योंकि अंग्रेजी भाषा की यह विशेषता है कि अंग्रेजी का नकारात्मक वाक्य अन्त में नकारात्मक होने पर सकारात्मक हो जाता है। अतः तत्काल भाषान्तरकार को पूरे वाक्य को समझकर उसकी आर्थी संरचना को ध्यान में रखकर ही अनुवाद करना चाहिए। अंग्रेजी वाक्य का हिन्दी में शब्दशः अनुवाद करना भ्रामक हो सकता है। उदाहरण के लिए एक वाक्य है– The Government of India is not unmindful of the need to take action. इस वाक्य का यदि भाषान्तरकार शब्दशः अनुवाद करता है तो हिन्दी में उसका अनुवाद भ्रामक हो सकता है, क्योंकि यहाँ (अंग्रेजी में दो नकारात्मक पदबन्ध मिलकर सकारात्मक बन जाते हैं।) इसलिए इस प्रकार के वाक्यों का अनुवाद पूरा वाक्य सुनकर, वाक्य की आर्थी संरचना को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। आशु अनुवाद का व्यावहारिक पक्ष काफी जटिल और मानसिक होता है क्योंकि दुभाषिया जब एक वाक्य का अनुवाद बोल रहा होता है, तब तक उसे दूसरा वाक्य सुनायी देने लगता है, जिसका अनुवाद सोचना उसके लिए आवश्यक होता है। तदुपरान्त तीसरा–चौथा वाक्य सुनायी देता है। इस तरह तत्काल भाषान्तरण वाचन से अधिक मानसिक क्रिया है। इस क्रिया का महत्त्वपूर्ण पक्ष यही है कि मूल वक्ता के वक्तव्य के कई वाक्यों का अभिप्रेत अर्थ लक्ष्य भाषा में किया जाए। त्वरित–भाषान्तरकार वक्तव्य के मूल मंतव्य पर निरन्तर ध्यान

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रखता है। वह एक साथ ही तीन काम कर रहा होता है। उसका ध्यान आर्थी संरचना–शाब्दी संरचना–और अभिव्यक्ति–कौशल तीनों पर एक साथ होता है। उसकी सारी मानसिक शक्तियों का संकेन्द्रण अनिवार्य है। किसी तरह भी विचलित मनोदशा और उद्वेग में दुभाषिया–कर्म सम्पादित नहीं हो सकता। वस्तुतः यह एक साधना है। दुभाषिया मूल वक्ता के भाषण के कुछ क्षण बाद बोलना शुरू करता है और मूल वक्ता के वक्तव्य समाप्त होने के कुछ क्षण बाद तक बोलता रहता है।

कभी–कभी दुभाषिया को किसी और भाषान्तरकार के भाषान्तरण का भाषान्तरण करना होता है। इस प्रक्रिया में मूल वक्ता के वक्तव्य समाप्त होने के बाद भी भाषान्तरकार को कुछ सेकेण्ड तक बोलना पड़ता है। यह व्यवस्था भारतीय संसद में है। भारत की संसद के दोनों सदनों में प्रादेशिक भाषाओं में भाषण होते हैं, उनका भाषान्तरण हिन्दी में होता है या अंग्रेजी में होता है। उस भाषान्तरण को सुनकर अंग्रेजी और हिन्दी के भाषान्तरकार अपनी–अपनी भाषाओं में बोलते हैं। प्रादेशिक भाषा कक्ष से जो भाषान्तर आता है उसका तत्काल अनुवाद हिन्दी और अंग्रेजी में कर दिया जाता है। परिणामस्वरूप कई बार सदन में एक साथ ही तीन भाषाएँ (प्रादेशिक, अंग्रेजी व हिन्दी) एक साथ सुनी जा सकती हैं क्योंकि मूल वक्तव्य, जो प्रादेशिक भाषा में था, उसका तत्काल भाषान्तरण हिन्दी और अंग्रेजी में किया जाता है। परिणामस्वरूप मूल वक्ता और दुभाषिया के वक्तव्यों में कुछ एक सेकेण्ड का अन्तराल आ ही जाता है।

दुभाषिया प्रविधि की समस्याएँ और समाधान

दुभाषिया–कर्म एक कठिन कार्य है, जिसमें दुभाषिया की शत–प्रतिशत मानसिक उपस्थिति अनिवार्य है। तत्काल–भाषान्तरण के दौरान कुछ यांत्रिक परेशानियाँ तो आती ही हैं, जैसे अचानक यंत्र (माइक्रोफोन, हेडफोन) आदि का निष्क्रिय हो जाना अथवा सभा–कक्षों में मूल वक्ता का माइक्रोफोन के सामने अत्यन्त धीमी आवाज में बोलना जिससे दुभाषिया को सुनने में कठिनाई हो रही हो अथवा वक्ता का उच्चारण अत्यंत दोषपूर्ण होना जिससे मूल बात समझ में नहीं आ रही हो आदि। जब वक्ता और दुभाषिया एक ही साथ बरावर–बराबर खड़े होते हैं तो सुनने की कठिनाई प्रायः नहीं होती परन्तु सभा कक्षों में जहाँ वक्ता से दुभाषिया काफी दूर बैठता है, इस प्रकार की कठिनाइयाँ हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त तत्काल भाषान्तरण की अन्यान्य समस्याएँ हैं:–

भाषागत समस्याः– किसी भाषा पर अधिकार केवल उसके शब्दों और व्याकरण के ज्ञान तक ही सीमित नहीं है। भाषान्तरकार को भाषा की मूल आत्मा, उसकी परम्पराओं, उसके स्रोतों और उसके साहित्य का भी ज्ञान होना चाहिए। उसे बोलचाल में प्रयुक्त होने वाले शब्दों और विभिन्न प्रकार के प्रयोगों का भी पता होना चाहिए। उदाहरण के लिए 'उस्ताद' शब्द का मूल अर्थ तो अध्यापक है लेकिन इसे कई अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उर्दू जानने वाले जानते हैं कि यदि इसके साथ 'जी' जोड़ दिया जाय तो उसका मतलब 'भड़वा' हो जाता है गाने वालियों और कोठों पर बैठने वालियों की संगत करने वाला उस्ताद जी कहलाता है। यह तनिक चालाक और शरारती व्यक्ति के लिए भी इस्तेमाल होता है जैसे कई बार कह दिया जाता है कि अमुक व्यक्ति बड़ा उस्ताद है। उसी प्रकार 'गुरु और 'हजरत' शब्द भी ऐसे हैं जिनका प्रयोग उनके मूल अर्थ के अतिरिक्त अन्य अर्थों में किया जा सकता है। अतः दुभाषिया को शब्द के प्रयोग के आधार पर भाषिक इकाई का अर्थ तय करना चाहिए।

किसी भाषा पर अधिकार प्राप्त करने के लिए उसकी पौराणिक कथाओं और उसकी संस्कृति की परम्पराओं का ज्ञान होना भी आवश्यक है। एक उदहारण लीजिए किसी अचूक औषधि तरकीब या अमोध–शस्त्र के लिए 'रामबाण' शब्द का प्रयोग किया जाता है। जिस व्यक्ति ने रामायण न पढ़ी हो उसे यह पता नहीं होता कि राम का बाण कभी खाली नहीं जाता था और इसी कारण जो औषधि या तरकीब असर किए बिना न रहे उसे रामवाण कह दिया जाता है।

अंग्रेजी में कई शब्द ऐसे हैं जिनके अर्थ भिन्न–भिन्न प्रदेशों में भिन्न होते हैं। उदाहरण के लिए 'कॉर्न' (Corn) शब्द को लीजिए–अमरीका में इसका अर्थ है मक्का, आयरलैण्ड में जई, आस्ट्रेलिया व ब्रिटेन में गेहूँ। भारत में मक्का। अभिप्राय यह है कि एक ही शब्द भिन्न देशों अथवा प्रदेशों में भिन्न अर्थों में प्रयुक्त होता है तो उसकी पूरी जानकारी दुभापिया को होनी चाहिए। इस सम्बन्ध में एक दिलचस्प उदाहरण दिया जाता है कि फ्रांस ने अमरीका से गेहूँ मँगाया। आदेश का भाषान्तरण करते हुए भाषान्तरकार ने गेहूँ के लिए प्रयुक्त फ्रांसीसी शब्द का अंग्रेजी अनुवाद कॉर्न (Corn) कर दिया क्योंकि भाषान्तरकार इंग्लैण्ड में पढ़ा था। इंग्लैण्ड में गेहूँ शब्द के लिए 'Corn' शब्द का प्रयोग होता है। अमरीका में कॉर्न मक्का के लिए प्रयुक्त होता है। इस तरह दुभाषिया की गलती से गेहूँ के लिए दिया गया आदेश अमरीकी प्रतिनिधियों ने मक्का समझ लिया। परिणामस्वरूप मक्का से भरा हुआ जहाज अमरीका ने फ्राँस भेज दिया और इस तरह बड़ी भूल हो गई। कहने का अभिप्राय यह है कि भाषान्तरकार को शब्दों के सार्वदेशिक प्रयोग और स्थानीय प्रयोग से पूर्णतः परिचित होना चाहिए अन्यथा इस तरह की भयावह भूलें होती ही रहेंगी। कहा जाता है कि द्वितीय विश्व युद्ध में हिरोशिमा और नागासाकी पर बम गिराने की घटना के पीछे भी जापानी और अंग्रेजी भाषा के मध्य अनुवाद सम्बन्धी ही भूल थी।

शब्दों का स्थानीय रूप भी भाषान्तरकार को जानना चाहिए। उदाहरण के लिए हिन्दी में 'ईख' और 'ऊख' एक ही अर्थ में प्रचलित शब्द हैं। यदि अनुवादक दोनों रूपों को नहीं जानता तो भाषान्तरण करते समय भूल कर सकता है।

वक्ता का अधकचरा भाषा ज्ञान :– मूल वक्ता स्रोत भाषा का अच्छा जानकार नहीं है तो दुभाषिया के सामने बड़ी कठिनाई उत्पन्न हो जाती है। प्रायः यह देखा गया है कि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

लोगों का अंग्रेजी ज्ञान अधकचरा होता है परन्तु अपनी योग्यता के प्रदर्शन हेतु वे अंग्रेजी में बोलने लगते हैं। इस प्रकार के वक्ता दुभाषिया के लिए एक समस्या और चुनौती होते हैं। कहा जाता है कि लोकसभा में हरियाणा के एक सदस्य ने भोंडी अंग्रेजी में बोलते हुए बाबू जगजीवन राम की प्रशंसा करनी चाही। अंग्रेजी ज्ञान उनका अधकचरा था। कहने लगे– "The honourable minister has risen from the gutter." वस्तुतः वे कहना चाहते थे कि माननीय मंत्री जी दलित वर्ग से उभरकर आये हैं। किन्तु इस बात को अंग्रेजी में कह पाना उनके लिए सम्भव न था। इसलिए उन्होंने 'गटर' (Gutter) शब्द का प्रयोग कर दिया। दुभाषिया की स्थिति अत्यन्त विषम हो गई। मजबूर होकर उसको कहना पड़ा माननीय मंत्री जी गटर से निकलकर नहीं आये हैं वरन् दलित वर्ग से उभर कर आये हैं। उसे यह भी कहना पड़ा कि वक्ता महोदय के अंग्रेजी भाषा के अधूरे ज्ञान के कारण यह भूल हुई है।

उच्चारण वैशिष्ट्य :– एक ही भाषा के उच्चारण में स्थान और प्रदेश के आधार पर भिन्नता मिलती है। मानक उच्चारण न होने से दुभाषिया के सामने समस्या आ जाती है। हिन्दी ही को लें तो भोजपुरी, अवधी और ब्रज भाषा–भाषियों के हिन्दी उच्चारण में भिन्नता मिलती है। विदेशी भाषाओं के उच्चारण के सम्बन्ध में यह बात और भी सच है। दक्षिण भारत और बंगाल के लोग जैसी अंग्रेजी बोलते हैं वैसी उत्तर भारत के नहीं। असम के लोग "च" का उच्चारण नहीं कर सकते उसके स्थान पर 'स' बोलेंगे। 'चाय' को 'साय' कहेंगे। 'चीन' को 'शीन' कहेंगे। मारवाड़ी लोग भी 'च' का उच्चारण नहीं कर सकते। वे 'चलो' को 'हलो' कहेंगे। 'चालान' को 'हालान' कहेंगे। पंजाबी 'चालान' को 'चलान', कहेंगे। कहना यह है कि मानक उच्चारण के अभाव में दुभाषिया के सामने बड़ी कठिनाई आती है। अतः उससे अपेक्षा की जाती है कि वह स्रोत भाषा के उच्चारणगत वैभिन्न्य और वैशिष्ट्य से भलीभाँति परिचित हो।

वक्ता का भाषा–प्रयोग :– कुछ वक्ता सपाट बयानी करते हैं तो कुछ लच्छेदार भाषा का प्रयोग करते हैं। उनके वक्तव्य में वाग्जाल बहुत अधिक होता है अर्थ कम। प्रायः इस प्रकार के प्रयोग वही लोग करते हैं जिनका भाषा ज्ञान असाधारण होता है। वे नये–नये शब्दों को गढ़ते हैं और उनका प्रयोग करते हैं। इस सम्बन्ध में संसद के कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं– पश्चिम बंगाल के कम्युनिस्ट सदस्य प्रो. हीरेन मुखर्जी अंग्रेजी के असाधारण विद्वान रहे हैं। एक बार किसी अंग्रेजी शब्द के ठीक अर्थ पर बहस हो रही थी। अध्यक्ष श्री मावलंकर ने कहा, चलिए प्रोफेसर साहब से पूछते हैं। मुखर्जी बोले – "Sir, I know enough of English to know that I can not know it enough."

एक और अवसर पर कश्मीर में आने वाले घुसपैठियों की चर्चा हो रही थी तो infiltrator शब्द जबान पर नहीं आ रहा था। तनिक रुके और बोले– "Soldiers by proxy"। अब इस प्रकार का प्रयोग वही कर सकता है जिसे भाषा पर सम्पूर्ण अधिकार हो। जनता पार्टी के सदस्य श्री रवीन्द्र वर्मा ने एक बार निम्नलिखित वाक्य बोलकर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषान्तरकार को मुसीबत में डाल दिया था। "The Government experts at growing a bush and then beating about it."

वहुत पुरानी बात है– डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी दहाड़ रहे थे। नेहरूजी की आलोचना कर रहे थे। एक कांग्रेसी सदस्य पंडित बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' ने उन्हें टोका। मुखर्जी ने उनकी ओर देखा तक नहीं। अध्यक्ष को सम्वोधित करके बोले– "Sir, I find that the sand is getting hotter than the sun." यह सुनना था कि सारी सभा में हँसी का फव्वारा छूट पड़ा। 'नवीन' बेचारे हतप्रभ हो गए।

इस प्रकार की भाषा का सफल अनुवाद कोई बिरला भाषान्तरकार ही कर सकता है।

लोकोक्तियाँ, कहावतें, मुहावरेः– आशु अनुवादक के लिए सवसे बड़ी चुनौती लोकोक्तियों, कहावतों और मुहावरों के अनुवाद की होती है क्योंकि लोकोक्तियाँ और कहावतें, समाज और संस्कृति सापेक्ष होती हैं और प्रत्येक समाज में अलग–अलग ढंग से पायी जाती हैं। देश के भौगोलिक कारण भी लोकोक्ति निर्माण में सहायक होते हैं। जो ठंडे देश हैं वहाँ यह कहावत 'To find a place in the Sun' सौभाग्य की सूचक है किन्तु गरम देश में 'दुर्भाग्य' की सूचक है। भारत जैसे गरम देश में शीतल छाया का ही प्रयोग किया जायेगा। सभी भाषाओं और संस्कृतियों में विचारों और भावनाओं में साम्य हो सकता है किन्तु कहावतों और लोकोक्तियों के रूप में उनकी अभिव्यक्ति भिन्न–भिन्न तरीकों से होती है। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में 'white lie' का प्रयोग ऐसे झूठ के लिए होता है जो हानि रहित हो और जो इसलिए बोला जाता है कि सुनने वाले को ठेस न पहुँचे। लेकिन कई अनुवादक इसे सफेद झूठ कह देते हैं। 'सफेद झूठ' वह झूठ है जो एकदम झूठ लगता है। इसलिए उसके लिए 'blatant lie' का प्रयोग ही ठीक है। इसी प्रकार 'to live from hand to mouth' मुहावरे का वास्तविक अर्थ है कि जो भी कमाएँ खर्च कर डालें, बचा कर न रखें। कई अनुवादक इसे गुजारा करना (to make both ends meet) के अर्थ में प्रयुक्त कर देते हैं। वास्तव में इसके लिए मुहावरा है 'हाथ में लाना और पात में खाना' या 'आधी बचे न कुत्ता खाए।'

वस्तुतः भाषान्तरकार के पास कहावतों, लोकोक्तियों और मुहावरों का भंडार होना चाहिए। एक ऐसा भंडार जो उसे कंठस्थ हो। इस सम्बन्ध में एक विस्तृत सूची पीछे दी जा चुकी है।

विशिष्ट पद–प्रयोगों के शाब्दिक अनुवाद की समस्याः– कहावतों, मुहावरों और विशिष्ट पद–प्रयोगों के शाब्दिक अनुवाद दुभाषिया को नहीं करना चाहिए, क्योंकि उससे कभी–कभी अर्थ का अनर्थ हो जाता है। उदाहरण के लिए सामान्यतः अंग्रेजी में 'हरामी' को 'Bastard' कहते हैं जो सहज ही किसी को फटकारने और डाँटने के उद्देश्य से प्रयोग किया जाता है। इस सम्बन्ध में द्वितीय विश्वयुद्ध का एक उदाहरण यहाँ द्रष्टव्य है–

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

एक बार एक सेनापति ने अपने सैनिकों को डाँटते हुए कहा– "you bastards! you ran away from a few communist insurgents who are no better than riff-raff. Let me tell you that I am a bigger bastard than all of you."

दुभाषिया 'हरामी' शब्द के लाक्षणिक अर्थ से अनभिज्ञ था और उसने उसका शाब्दिक अर्थ करके कहा–

"His Excellency says that none of your mothers were married to your fathers when you were born. He admits, however that his mother was also not married to his father when he was born." कहने का मतलब यह है कि शाब्दिक अनुवाद सब गुड़ गोबर कर देता है। अर्थ का अनर्थ करने से बचने का यही तरीका है कि शाब्दिक अनुवाद न किया जांय।

भाषा की भंगिमाएँ और आशु अनुवादः– मूल वक्ता स्रोत भाषा का अधिकारी विद्वान है तो उसके वक्तव्य में लक्ष्यार्थ और व्यंग्यार्थ तथा श्लेष प्रधान प्रयोगों की भरमार रहती है। उसकी भाषा में हास्य–विनोद, काव्य प्रयोग, विशिष्ट उद्धरण और कई प्रकार के आंकड़ों का भी प्रयोग हो सकता है। ऐसी स्थिति में दुभाषिया की कठिनाई और बढ़ जाती है। मूल वक्ता जब हँसाने वाली उक्तियाँ और फब्तियाँ कसता है तो भाषान्तरकार असमंजस में पड़ जाता है। भारतीय संसद में प्रायः इस प्रकार के चुनौती भरे भाषण होते रहते हैं।

हास्य रस के अनुवाद से एक कठिनाई इस कारण उत्पन्न होती है कि प्रत्येक संस्कृति में हास्य के अपने प्रकार हैं। कई बार हल्का–सा इशारा, कोई सूक्ष्म उक्ति हँसी का स्रोत बन जाती है लेकिन उसका अनुवाद लगभग असंभव हो जाता है। एक उदाहरण देखिए–

एक बार एक कांग्रेसी सदस्य ने बड़ा धुआँधार भाषण दिया। प्रो. हीरेन मुखर्जी उन सज्जन के तुरन्त बाद बोलने के लिए उठे तो कहने लगे– "Sir! you have just now heard an ejaculatary speech from my Hon. friend..." पीलू कहाँ चुप रहने वाले थे। नाटकीय ढंग से फुसफुसाये– "Fortunately, Sir, he did it with his mouth!"

एक शब्द के दो अर्थों ने वह कमाल दिखाया कि सभा में दो मिनट तक हँसी का फव्वारा छूटता रहा।

कभी–कभी व्याख्यान के दौरान व्याख्याकार कविता के किसी पद या श्लोक या कविता और शेरो शायरी का प्रयोग करता है। ऐसी स्थिति में दुभाषिया को कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है। इसमें उसका काव्य ज्ञान ही सम्बल होता है। एक बार लोक सभा में व्याख्यान के दौरान यह शेर पढ़ा गया–

हम आह भी करते हैं तो हो जाते हैं बदनाम,
वो क़त्ल भी करते हैं तो चर्चा नहीं होती।

भाषान्तरकार काफी पढ़ा–लिखा और विस्तृत ज्ञान वाला व्यक्ति था। उसे इस शेर

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

की समानार्थक अंग्रेजी कहावत सूझ गईः

"One man may steal the horse, while another may not look over the hedge."

अज्ञात ग्रन्थों के उद्धरणों और आँकड़ों के अनुवाद की समस्याः वक्ता कभी–कभी अज्ञात ग्रन्थों से अपने भाषण में उद्धरण पेश करते हैं तथा वजट सत्र में अक्सर आँकड़े पेश किये जाते हैं, जिनमें करोड़ों से लेकर इकाई तक संख्या होती है। ऐसी स्थिति में भाषान्तरकार के सामने समस्या रहती है कि लम्बे–लम्बे आँकड़ों का तत्काल लक्ष्य भाषा में अन्तरण कैसे करे अथवा नितान्त अज्ञात ग्रन्थों के उद्धरणों के रूपान्तरण पेश करे।

लिखित भाषणः– कभी–कभी लिखित भाषण बहुत तीव्र गति से पढ़े जाते हैं जो दुभाषिया के लिए चुनौती होते हैं और वक्ता की गति के साथ तालमेल विठाना उसके लिए मुश्किल होता है।

इसी तरह से समय–समय पर अन्यान्य समस्याएँ पैदा हो सकती हैं, यथा मुख्य वक्ता के भाषणों के बीच श्रोताओं द्वारा टोका–टाकी, शोरगुल, मंच पर गड़वडी आदि। लोकसभा के सदनों में मुख्य वक्ता के आसपास बैठे लोगों की बातचीत और विपक्षी सदस्यों द्वारा मेजें थपथपाना अथवा नारे लगाना, अनुशासनहीनता करना आदि। ऐसी तात्कालिक समस्यायें हो सकती हैं जिनके कारण कठिनाई उत्पन्न हो सकती है। समग्रतः दुभाषिया कर्म जटिल है। इसकी अनेक समस्याएँ हैं किन्तु व्यावहारिक प्रशिक्षण से इनका समाधान हो सकता है।

वस्तुतः दुभाषिया–प्रविधि का प्रशिक्षण होना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ के भूतपूर्व मुख्य भाषान्तरकार मिस्टर हरबर्ट ने लिखा है–

"भाषान्तरकार के लिए इतना ही काफी नहीं है कि उसे उस विषय का ज्ञान हो, जो किसी सम्मेलन या सभा में उठाया जाने वाला है। उसके साथ–साथ उसका सामान्य ज्ञान अत्यधिक विस्तृत होना चाहिए। जिन युवा भाषान्तरकारों में ज्ञान का भंडार सीमित है उन्हें सबसे पहले इस त्रुटि को पूरा करना चाहिए चाहे इसके लिए उन्हें कुछ वर्ष तक प्रतीक्षा ही क्यों न करनी पड़े, तभी वे सफल भाषान्तरकार हो सकते हैं। आदर्श भाषान्तरकार वह है जो चलता–फिरता विश्वकोश हो और जो मानवीय कार्यकलाप के प्रत्येक पक्ष से और उसकी शब्दावली से परिचित हो। उसे ऐसे विषयों का ज्ञान होना चाहिए जो बहुधा प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से आ जाते हैं। साहित्य, राजनीति, अर्थशास्त्र, भूगोल, दीवानी कानून, व्यापारिक कानून, संवैधानिक कानून, बजट बनाने के तरीके, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार, संसद की प्रक्रिया, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, चिकित्सा विज्ञान, कृषि शास्त्र, उद्योग, वीमा–कम्पनियों का काम, नौवहन सम्बन्धी कानून, समाज विज्ञान आदि–आदि।

त्वरित भाषान्तरकार को भाषा और साहित्य का विद्वान तो होना ही चाहिए साथ ही उसका सामान्य ज्ञान बहुत विस्तृत होना चाहिए। उसका प्रशिक्षण होना चाहिए। प्रशिक्षण

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के दौरान व्याख्यान के एक अंश का अनुवाद उसे समझा दिया जाए तदुपरान्त विशेषज्ञ द्वारा माइक पर बोलकर उसे सुनाया जाय और उसे तुरन्त अनुवाद करने को कहा जाए। उसका बार–बार अभ्यास कराया जाए। टेपित व्याख्यान की पद्धति भी अपनायी जा सकती है अर्थात् दुभाषिया का प्रशिक्षण लेने वाला व्यक्ति व्याख्यान के टेप बजाकर धीमे–धीमे सुने और तत्काल उसका भाषान्तरण अपने प्रशिक्षक के सामने प्रस्तुत करे। अपनी भूलें समझे और पुनः भाषान्तरण करे। इस निरन्तर अभ्यास से उसकी गति बढ़ेगी और कालान्तर में सक्षम दुभाषिया के रूप में उसका विकास होगा। यह धारणा भ्रान्त है कि दुभाषिया पैदा होते हैं बनाये नहीं जाते। प्रतिभा निन्यानबे प्रतिशत अर्जित की जाती है। (Genius is ninety nine percent by perspiration and one percent by inspiration) हिन्दी में भी कहावत है–

करत करत अभ्यास के, जड़मति होत सुजान।

संकेत विज्ञान और देह भाषा : आशु अनुवाद का प्रसंग

आशु अनुवाद में देह भाषा अर्थात् शारीरिक संकेतन की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। जो बात वक्ता शब्दों से नहीं कहता है उसे संकतों से कह देता है। इस सम्बन्ध में उद्धव शतक का एक उदाहरण है– उद्धव जब गोपियों को कृष्ण का संदेश देने आते हैं तो गोपियाँ अपनी व्यथा कथा शब्दों से कहीं अधिक दैहिक संकेतों से प्रकट करती हैं–

नैकु कही बैननु सौं, अनेक कही नैनन सौं।
बची खुची सोउ कहि दीनी हिचकीन सौं।

महाकवि विहारी की नायिका भी नायक से वार्तालाप भाषा के स्थान पर संकेतों के माध्यम से अधिक करती है–

कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत लजियात।
भरे भौन में करत हैं, नैनन ही सौं बात।

कुल मिलाकर कहना यह है कि जिस प्रकार साहित्य में भावों और विचारों की अभिव्यक्ति के लिए संकेतों और शारीरिक चेष्टाओं का सहारा लिया जाता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ वक्ता भी भाषिक संकेतों के साथ ही विविध मुद्राओं, भंगिमाओं, शारीरिक चेष्टाओं और स्वर के आरोह–अवरोह के द्वारा अपना मूल वक्तव्य श्रोताओं के सामने प्रकट करता है। अतः दुभाषिया के लिए आवश्यक हो जाता है कि वक्ता के अभिप्राय को ठीक से समझे और उसे श्रोताओं तक पहुँचा सके। इस कार्य के लिए उसे संकेतन विज्ञान और देह भाषा का गंभीर ज्ञान होना चाहिए।

भाषा मानव–सम्प्रेषण के अत्यन्त महत्त्वपूर्ण साधनों में से एक है। इसकी प्रकृति और प्रकार्य विकासवादी दृष्टि से समझे जा सकते हैं। कोई समय ऐसा भी रहा होगा जब भाषा का वाचिक स्तर पर कोई अस्तित्व नहीं था, मानव आपस में इशारों, भंगिमाओं अथवा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

चित्रों के माध्यम से विचार सम्प्रेषित करते रहे होंगे। संकेत और भंगिमाएँ–मुद्राएँ विचार अथवा भावाभिव्यक्ति के प्राचीनतम रूप हैं। संकेतन के इन आदिम रूपों का महत्त्व विचार अथवा भाव–सम्प्रेषण की दृष्टि से आज भी कम नहीं हुआ है। संकेतन की स्थिति विविध भाषा–भाषियों में सरल नहीं वरन् जटिल है। यह आवश्यक नहीं है कि रूस, चीन, अमेरिका तथा हिन्दुस्तान के व्यक्तियों द्वारा किये जाने वाले संकेत स्पष्टतः एक ही भाव के सूचक हों और यदि एक ही भाव के सूचक भी हों तो भी यह जरूरी नहीं है कि भाव की महानता, सघनता व गहराई एक ही प्रकार की हो। उदाहरण के लिए मुस्कराहट सरल भी हो सकती है और कुटिल भी, मधुर भी हो सकती है और व्यंग्यात्मक भी। कहने का तात्पर्य यह है कि कुछ मुद्राओं और शारीरिक चेष्टाओं से अभिव्यक्त किये गये भाव सदा, सर्वदा और सभी व्यक्तियों में एक जैसे नहीं होते। वे देशकाल, समाज, संस्कृति और व्यक्ति–सापेक्ष होते हैं। अतः संकेतन की गम्भीर जानकारी दुभाषिया को होनी चाहिए।

संकेत जब असदृश्य वस्तुओं के लिए किये जाते हैं तब सामूहिक और रूढ़िगत स्तर पर उनके संदर्भ भले सन्निकट हों किन्तु व्यक्तिगत स्तर पर वे व्यष्टि की बोध–प्रक्रिया का अरूप संकेत मात्र ही होते हैं। अवेलार का कथन है कि शब्द विचार को और विचार वस्तुओं को सामने रखते हैं या प्रस्तुत करते हैं। अर्थवत्ता का प्रभाव क्षेत्र अमूर्त विचार का प्रभाव क्षेत्र है जहाँ विशिष्ट अभिलक्षण बोध–प्रक्रिया को प्रजनित करने के लिए सहसंबद्ध होते हैं। यह विश्लेषण और संवादिता का व्यापार है। हम किसी वस्तु विशेष की विशिष्टताओं या आर्थी अभिलक्षणों का विश्लेषण प्रत्यक्षित समानताओं या असमान वस्तुओं में निहित संवादिता से उन (वस्तुओं) को परस्पर सहवद्ध करने के लिए करते हैं, ये संवादिताएँ केवल प्रत्यक्षित होती हैं, और संवादी समझी जाती हैं। इस प्रकार इनसे मात्र व्यष्टिगत बोध–प्रक्रिया का प्रतिनिधित्व होता है।

अवेलार के ही अनुसार सामान्यतः मानसिक विम्व उलझे हुए होते हैं। शब्द या संकेत द्वारा ही ये मूर्त रूप ग्रहण करते हैं। उन्होंने उदाहरण देते हुए कहा है– "कुलीन" शब्द पशु और व्यक्ति के संदर्भ में प्रयुक्त होने पर भिन्न अर्थ का द्योतक होगा। यही नहीं 'कुलीन' शब्द जिस अवधारणात्मक यथार्थ की ओर संकेत करता है, वह अलग–अलग व्यक्तियों के संदर्भ में भिन्न हो सकता है क्योंकि अवधारणात्मक यथार्थ मानसिक विम्व की ओर संकेत करता है, जो व्यक्तियों के स्तर पर भिन्न–भिन्न हो सकते हैं।

वस्तुतः अवेलार ने मानसिक बिम्व सिद्धान्त प्रस्तुत किया है। मोटे तौर पर जिसके अनुसार दो वक्ताओं और व्याख्याकारों द्वारा प्रस्तुत एक ही शब्द भिन्न–भिन्न अर्थ का द्योतक हो सकता है। इसीलिए जिन शब्दों से दो व्यक्ति एक विशेष धरातल पर अर्थ व्यक्त करते हैं वह समान मानसिक बिम्वो पर आधारित भी हो सकता है और नहीं भी हो सकता। यदि दो व्यक्ति किसी को 'सौम्य' कहते हैं तो उनकी तर्क या बोध–प्रक्रिया दो विभिन्न मानसिक बिंबों पर आधारित हो सकती है।[1]

1. The Abelardian Semiotics, Structures of Signification, Vol. 1, 1988

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

संकेत अपने आप में वस्तु नहीं है। वह वस्तु की अपेक्षा एक निरन्तर वर्तमान सत्ता है। पोर्टरॉयल लॉजिक के अनुसार संकेत संदर्भित वस्तु के विचार को प्रकट करता है, वस्तु को नहीं। संकेत एक ध्वन्यात्मक शब्द भी हो सकता है और भंगिमा भी।[1]

वस्तुतः 'संकेत' और 'प्रतीक' में भी भ्रम नहीं होना चाहिए। प्रतीक पूर्वकालिक संकेत ही हैं जो सामूहिक विरासत के अंग बन गए, क्योंकि वे सांकेतिक वस्तु के स्थान पर होते हैं, ऐसी वस्तु के स्थान पर जिसकी अर्थवत्ता पहले से ही निश्चित होती है। सारे धार्मिक और सांस्कृतिक प्रतीक इसी बात की पुष्टि करते हैं।

भंगिमा या मुद्रा अथवा अन्य शारीरिक चेष्टाएँ, व्यक्ति की मनोदशा का संकेत देती हैं। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वे हमेशा एक ही प्रकार की मानसिक स्थिति की ओर इशारा करें। इसलिए संकेत हमेशा सृजित होने की प्रक्रिया में रहते हैं।

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि आशु अनुवादक को संकेतन विज्ञान और देह.भाषा का भी ज्ञान होना चाहिए ताकि वक्ता द्वारा प्रयुक्त शब्द से उसके मानसिक बिम्ब और दृष्टिकोण का आभास मिल सके और उसी दृष्टिकोण को दुभाषिया लक्ष्य श्रोताओं तक सम्प्रेषित कर सके। वस्तुतः मूल वक्ता के भावाभिव्यक्ति मूलक संकेत और शारीरिक चेष्टाएँ उसके 'मोटिफ' को रेखांकित करती हैं, उसके अभीष्ट अर्थ, उसके निहितार्थ को प्रकाशित करती हैं, और इस निहितार्थ को लक्ष्य श्रोताओं तक पहुँचाने के लिए दुभाषिया को देह भाषा पर भी ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। अस्तु।

1. A Arnuld and P. Nicale La Logique.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक प्रतिबिम्बन और समन्वय में अनुवाद की भूमिका

प्रत्येक देश के साहित्य और उसके सांस्कृतिक घटकों का सम्बन्ध अभिन्न होता है, साथ ही नित्य भी। समाज में होने वाले सांस्कृतिक परिवर्तनों को तत्कालीन साहित्य प्रतिबिम्बित करता है। सामाजिक यथार्थ को रेखांकित करने वाला साहित्य ही प्रासंगिक और महत्त्वपूर्ण माना जाता है। यही कारण है कि साहित्य और समाज के अनुलोम सम्बन्ध निरन्तर बने रहते हैं। मानव समाज का यथार्थ उस समाज की पारम्परिक संस्कृति में परिवर्तन लाता है और इस तरह संस्कृति विकासोन्मुख होती है। समाज के विकासोन्मुख होने से संस्कृति विकासोन्मुख होती है और संस्कृति और समाज से जुड़ा हुआ साहित्य भी विकासशील होता है। इस तरह साहित्य, समाज और संस्कृति का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध बनता है। साहित्य और संस्कृति के इस अभिन्न सम्बन्ध के कारण ही संस्कृति के विविध आयामों से जुड़ी हुई शब्दावली साहित्य में अनायास ही आ जाती है और उसका अनुवाद एक समस्या पैदा कर देता है। प्रत्येक भाषा में अनुभवों का अंकन अपना निजी होता है और दूसरी भाषा से भिन्न भी। इसीलिए एक भाषा में प्रयुक्त अनेक शब्द ऐसे होते हैं जिनके दूसरी भाषाओं में अर्थ विस्तार अथवा अर्थ संकोच के कारण यथावत् समतुल्य नहीं मिल पाते। किसी एक भाषा के अनेक शब्दों की सम्पूर्ण व्यंजनाओं का अन्य भाषा के निकटतम शंब्दों की व्यंजनाओं से सम्पूर्ण साम्य नहीं हो सकता। जहाँ तक शब्द के बीज भाव का प्रश्न है, उसकी अभिव्यंजना का प्रश्न है तो कहा जा सकता है कि उसी प्रकार के केन्द्रीय भाव अथवा अभिव्यंजना से सम्पृक्त शब्द दूसरी भाषा में प्रायः नहीं मिल पाते। इस प्रकार यह समतुल्यों की कठिनाई ही संस्कृतिगर्भित साहित्य के अनुवाद की कठिनाई है।

सांस्कृतिक प्रतिबिम्बन की प्रक्रिया में भारतीय संस्कृति और साहित्य को लक्ष्य में रखकर विचार करना यहाँ समीचीन होगा। भारतीय संस्कृति के अनेक आयाम हैं— भौगोलिक, ऐतिहासिक, राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक और कला सम्बन्धी। प्रत्येक आयाम में अनुवाद की एक विशिष्ट भूमिका है। भारतीय साहित्य के सन्दर्भ में, वस्तुतः अनुवाद का प्रभाव द्वन्द्वात्मक प्रतीत होता है अर्थात् कभी साहित्य के अनुवादों की प्रक्रिया ने संस्कृति को प्रभावित किया है और कभी संस्कृति ने अनुवाद को। इस तरह प्रभाव का यह क्रम गतिशील है।

भारतीय संस्कृति के सम्बन्ध में अनेक धारणाएँ प्रचलित हैं। जैसे कि भारतीय संस्कृति एक है। भारत बहुसांस्कृतिक देश है। भारत में अनेक संस्कृतियों के होते हुए भी उनमें एकता है। यहाँ अनेकता उपासना पद्धतियों को लेकर है। कुल मिलाकर भारतीय संस्कृति "अविभक्त विभक्तेषु" है। भारतीय संस्कृति सम्बन्धी इन धारणाओं की मीमांसा भारतीय इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालने से स्वतः ही हो जाती है। भारत के प्राचीन इतिहास

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

को देखें तो हम पाते हैं कि हमारा साहित्य अशोक काल तक मौखिक परम्परा के रूप में ही था। वेद की ऋचाएँ अथवा मंत्र सभी मौखिक परम्परा से विकसित हुए। जब से लिखित साहित्य की परम्परा का विकास हुआ, अनुवाद का भी विकास हुआ। संस्कृत में अनुवाद की स्थिति को रेखांकित करते हुए संस्कृत वाङ्मय कोश के सम्पादक डा. श्री भा. वर्णेकर ने लिखा है कि उन्नीसवीं शती तक संस्कृत के ग्रन्थों के ही अनुवाद अन्य भाषाओं में प्रस्तुत करने की परम्परा थी। कालान्तर में संस्कृत में दूसरी भारतीय भाषाओं और विदेशी भाषाओं के अनुवाद भी प्रस्तुत किए जाने लगे। इन अनुवादों में तुलसी की रामायण, ज्ञानेश्वरी, गाथा सप्तशती, धम्मपद, गाथाशतक, उमर खय्याम की रुबाइयाँ, कामायनी, श्रीकृष्णामृत, बाइबिल, अरेबियन नाइट्स आदि ग्रन्थों के संस्कृत अनुवाद विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। विदेशी साहित्यकारों में शेक्सपियर, अरस्तू, गेटे आदि के अनुवाद भी संस्कृत में प्रस्तुत हो चुके हैं। संस्कृत में धार्मिक, आध्यात्मिक, दार्शनिक साहित्य का अनुवाद अधिक हुआ है, जो भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्वों को प्रभावित करता रहा है। वस्तुतः यहाँ अनुवाद का जो संदर्भ ग्राह्य है, वह है मूलनिष्ठ अनुवाद के साथ ही भावानुवाद, छायानुवाद रूपांतरण (ट्रांसक्रिएशन) भी है।

अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कार्य हुए हैं, संस्कृत से भी और हिन्दी से भी। पूर्वांचल की ओर देखें तो असमिया, उड़िया, मणिपुरी में अपेक्षाकृत इतने अनुवाद नहीं हुए किन्तु बंगला में सर्वाधिक हुए। 1954 से साहित्य अकादमी के कार्यरत होने पर अनुवाद का सिलसिला बढ़ा और हम अन्य प्रादेशिक भाषाओं के साहित्य और संस्कृति से परिचित होने लगे। असमिया में कम कोश बने हैं। असमिया में रामचरित मानस, प्रेमचन्द की कहानियों, उपन्यासों तथा भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता कवि पंत, दिनकर, महादेवी और अज्ञेय की कविताओं, प्रसाद की कामायनी के अनुवाद हिन्दी से हुए हैं तथा प्रसाद के नाटक "चन्द्रगुप्त" का अनुवाद अकादमी ने करवाया है। असम में हिन्दी साहित्य से सामान्यजन नहीं के बराबर परिचित हैं। असमिया से हिन्दी में वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य के तीन उपन्यासों, "लद्दाख की छाया में" आदि का अनुवाद हुआ है। इसके अतिरिक्त शंकर देव और बैजनाथ बरुआ आदि की पुस्तकें भी हिन्दी में हैं। मात्र इतने कार्य से सांस्कृतिक आदान–प्रदान उतना नहीं हो सकता जितना होना चाहिए। असम संस्कृति को रेखांकित करने वाली कामाख्या या कामरूप की कला संबंधी ग्रंथों का अनुवाद हिन्दी में होना चाहिए। अंग्रेजी में वहुत पहले हो चुका है। मणिपुरी हिन्दी सभा ने कुछ अनुवाद कार्य कराए हैं। कुल मिलाकर मणिपुरी, असमिया, उड़िया आदि भाषाओं के अनुवाद पर यदि विहंगम दृष्टि डाली जाए तो कहा जा सकता है कि अब तक यथेष्ट अनुवाद–कार्य नहीं हो पाया है। यही कारण है कि पूर्वांचल में हिन्दी भाषा–भाषी प्रान्तों की पहचान ठीक से नहीं बन पाई है।

हिन्दी में सर्वाधिक अनुवाद बंगला से हुआ है। कृतिवास की रामायण, बाउल गीत, राम प्रसादी भजन, गोविन्द दास माधवदास के पद, मध्ययुग के साहित्य से चैतन्य

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

चरितामृत, चंडीकंकण तथा आधुनिक युग में रवीन्द्रनाथ टैगोर, माइकेल मधुसूदन दत्त, नजरुल इस्लाम, नवीन चन्द्र सेन, विष्णु दे, बुद्धदेव बसु, सुनील गांगुली, सुकान्त भट्टाचार्य आदि बीसियों कवियों की रचनाओं का अनुवाद हिन्दी में हो चुका है। हिन्दी में सर्वाधिक अनुवाद उपन्यासों और कहानियों का हुआ है। बंकिम चन्द्र, शरत चन्द्र, राखालदास, रवीन्द्रनाथ, ताराशंकर, मलिक बनर्जी, प्रबोध कुमार सान्याल, शंकर, विमल मित्र, आशापूर्ण देवी, महाश्वेता देवी आदि के कथा साहित्य का हिन्दी में अनुवाद हो चुका है। हिन्दी कवियों में निराला, पंत और अज्ञेय पर बंगला का प्रभाव है। कथाकारों में अमृतलाल नागर और शिवानी शरत चन्द्र के प्रभाव को मानते ही हैं। रेणु के "मैला आँचल" में सीता नाथ भादुड़ी के "ढोढ़ाई चरित मानस" की छाप देखने को मिलती है। बंगला कथा साहित्य की सामाजिकता, करुणा, त्रासजन्य प्रबल भावावेग, शोकजन्य कोमल अनुभूतियों ने हिंदी पाठक को आन्दोलित किया है। बंगला से हिन्दी में लगभग पाँच सौ से भी अधिक उपन्यास कहानियाँ अनूदित हुई हैं। सैकड़ों काव्य–कृत्तियाँ और कविताएँ अनूदित हुई हैं। सौ के लगभग नाटक भी अनूदित हुए हैं। प्रतिभा अग्रवाल दो दर्जन के लगभग बंगला नाटकों का अनुवाद कर चुकी हैं। अनुवाद के इस क्रम में हिन्दी लेखकों और कवियों में रामचन्द्र शुक्ल, रूप नारायण पाण्डेय, निराला, अज्ञेय, हंस कुमार तिवारी, धन्य कुमार जैन, रणजीत साहा तक पचासों लेखकों ने योगदान किया है।

दक्षिण में तेलुगु, तमिल, मलयालम, कन्नड़ में हिन्दी से अनेक अनुवाद हुए हैं। महाकाव्यों में रामचरित मानस और कामायनी, उपन्यासों में प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, यशपाल, भगवती चरण वर्मा, वृन्दावन लाल वर्मा, भीष्म साहनी, रेणु, चतुर सेन शास्त्री, विष्णु प्रभाकर आदि के साहित्य से दक्षिण भारत के साहित्यकार परिचित हैं। इसी तरह दक्षिण भारत की भाषाओं के सुप्रसिद्ध रचनाकारों सुब्रह्मण्यम भारती, तिरुक्कुरल आदि से हिन्दी भाषी भी परिचित हैं। किन्तु आधुनिक साहित्य अपेक्षाकृत उधर कम पहुँचा है। मलयालम में पिछले चार दशक के अच्छे हिन्दी साहित्य का अनुवाद हो चुका है। परन्तु तमिल में अनुवाद कम हुआ है। तेलुगु और कन्नड़ में और भी कम हुआ है। हिन्दी के लोग मलयालम कविता में केवल बल्लत्तोल और जी. शंकर कुरुप का नाम जानते हैं। अन्य श्रेष्ठ कवियों– बालामरिंग अम्मा, सगत कुमारी, अय्यप्पा पणिकर आदि के अनुवाद नहीं हुए हैं। तमिल में तिरुवन्कुल और सुब्रह्मण्यम भारती के नामों के अलावा हिन्दी में अपरिचय का घटाटोप है। कन्नड़ में कुछ काम हुआ है। बसवेश्वर से लेकर मास्ती, वेन्द्रे शिवराम कारंत, भैरप्पा, अनन्तमूर्ति, कुर्वेंयु, गिरीश करनाड, लंकेश, गोपाल कृष्ण अडिग, सिद्धलिंगप्पा, सरोजिनी महिषी आदि की रचनाएँ हिन्दी में उपलब्ध हैं। तेलुगु में वेमना, विश्वनाथ सत्यनारायण पाल्गुलि पद्मराजु, नार्ला वेंकटेश्वर राज तथा दाशरथी, सी. नारायणी रेड्डी आदि की रचनाएँ हिन्दी में अनूदित हुई हैं। किन्तु प्राचीन आन्ध्र साहित्य से हिन्दी के लोग अपरिचित हैं। तमिल की कंबन रामायण, तेलुगु की रंगनाथ रामायण और कन्नड़ की कम्ब

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

रामायण के कुछ अंश हिन्दी में मिलते हैं परन्तु मध्ययुग के विपुल साहित्य से हिन्दी भाषी अपरिचित हैं। सांस्कृतिक आदान–प्रदान के लिए दक्षिण के साहित्य से उत्तरवासियों का परिचय आवश्यक एवं अपरिहार्य हैं।

पश्चिमी भारतीय भाषाओं में मराठी, गुजराती, सिन्धी से बहुत–सा साहित्य हिन्दी में अनूदित हुआ है। प्राचीन साहित्य में से ज्ञानेश्वरी, नरसी मेहता आदि का अनुवाद हिन्दी में हुआ है। समर्थ गुजराती लेखक कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी का सुप्रसिद्ध उपन्यास कृष्णावतार हिन्दी में अनूदित हो चुका है। इसी तरह मराठी लेखक शिवाजी सावंत का "छावा" विष्णु खाण्डेकर का "ययाति" आदि हिन्दी में काफी लोकप्रिय हैं।

वस्तुतः भाषांतरण की दृष्टि से पश्चिमी भारतीय भाषाओं का हिन्दी से संबंध काफी निकट का है। गुजरात तो अर्ध हिन्दी प्रान्त ही जैसा है। गुजराती की एकनाथी रामायण भी हिन्दी में उपलब्ध है। गुजराती के 15वीं शती के कवियों में––नरसिंह मेहता, भलण, कृष्णदास, 16वीं शती के दादूदयाल, मीराबाई, ईसरबारौट, 17वीं शती के पुष्कर प्राणनाथ, इन्द्रामती, अरवो, 18वीं शती के दलयतिराय, खुमान बाई, ब्रह्मनंद, प्रेमानन्द स्वामी (प्रेमसखी), मनोहर स्वामी सच्चिदानन्द मूलदास, 19वीं शती के नृसिंहाचार्य अरजुन भगत, दीनदरवेश, 20वीं शती के काजी अनवर मियां, रंग अवधूत महाराज, राजकवि मूलदास आदि की रचनाएँ गुजराती के साथ ही हिन्दी की रचनाएँ जैसी ही प्रतीत होती हैं।[1] मराठी में विष्णु रा. खांडेकर और शिवाजी सावंत के बहुचर्चित कथा साहित्य के हिन्दी रूपांतर के साथ ही हरि नारायण आमटे, वामन मल्हार जोशी, फड़के, माडावोलकंर, व्यंकटेश माडगूलवर के उपन्यास भी हिन्दी में अनूदित हुए हैं। नए लेखकों में गंगाधर गाडगिल के कुछ उपन्यास तथा जयंत दलवी, विजय तेंडुलकर के नाटक भी हिन्दी में उपलब्ध हैं परन्तु नई ऐतिहासिक और सामाजिक गद्यकृतियाँ मराठी और गुजराती से हिन्दी में अभी अनूदित होना शेष हैं। मराठी के इतिहासाचार्य के नाम से विख्यात बैजनाथ काशीनाथ राजवाडे की कृति "विवाह संस्था का इतिहास" नामक ग्रंथ सौ वर्ष बाद अब हिन्दी में अनूदित हुआ है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है बंगाल, महाराष्ट्र और तमिलनाडु में 19वीं शती के प्रारम्भ में होने वाले पुनर्जागरण की झलक हिन्दी में अनुवाद के माध्यम से थोड़ी सी अब मिली है। वस्तुतः अनुवाद का सांस्कृतिक रथ अभी धीमी गति से ही गतिमान है। यही कारण है कि ज्ञानपीठ और साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित अहिन्दी के साहित्यकारों की रचनाएँ भी हिन्दी में बहुत देर से अनूदित एवं चर्चित होती हैं अथवा होती ही नहीं। उदाहरणार्थ– महाभारत पर लिखी गई मराठी की "युगान्त" जैसी सशक्त अकादमी पुरस्कार प्राप्त रचना का दस वर्ष बाद जब हिन्दी में अनुवाद हुआ तब तक लेखिका दिवंगत हो चुकी थीं।[2]

1. डॉ॰ नटवर लाल अम्बालाल व्यास के आलेख से
2. डॉ॰ प्रभाकर माचवे के आलेख से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

उत्तर भारतीय साहित्य में हिन्दी और कश्मीरी में आदान–प्रदान अत्यधिक कम हुआ है। पंजाबी साहित्य तुलनात्मक दृष्टि से हिन्दी में काफी अनूदित हुआ है। "गुरु ग्रंथ साहब" के काव्यात्मक अंशों का अनुवाद, हीररांझा का अनुवाद हिन्दी में हो चुका है। आधुनिक पंजाबी के रचनाकारों में भाई वीर सिंह, नानक सिंह और गुरुवख्श सिंह से लेकर अमृता प्रीतम, हरभजन सिंह, करतार सिंह दुग्गल, दिलीप कौर तक की रचनाएँ हिन्दी में वखूबी मिल जाती हैं।

उर्दू की पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद बहुत हुए हैं, कहा जा सकता है कि लिप्यंतरण बहुत हुए हैं। पॉकेट बुक सीरीज में बुक स्टालों पर गालिव, मोमिन, दाग, हातिम, इक़बाल, जिगर, ज़ोश, फिराक, असर, नूह, ताजवर अर्श, फैज, साहिर, असगर, जौक़, सौदा, नज़ीर, बहादुरशाह "जफ़र", अकबर, हाली, सफी, जलील, फानी, चकबस्त, बेखुद, रज़ा, मज़ाज, सागर, जगन्नाथ आज़ाद, महेश चन्द्र "नक्श", मासूम रज़ा राही, नरेश कुमार "शाद", ज़ोहरा "निगाह" आदि अन्यान्य पुराने नये कवियों की कविताओं के संकलन हिन्दी में उपलब्ध हैं। यही नहीं उर्दू के गद्य साहित्य का भी अनुवाद हिन्दी में काफी कुछ हुआ है। कृशनचंदर, बेदी, कुर्रतुलऐन हैदर, अस्मत चुगताई, काज़ी अब्दुल सत्तार, अहमद नदीम कासमी आदि। जहाँ तक काव्य एवं कथा साहित्य के अनुवाद का प्रश्न है बंगला और उर्दू का सर्वाधिक प्रभाव हिन्दी साहित्य–संस्कृति पर पड़ा है। इसका कारण भाषा वैज्ञानिक है। उर्दू और हिन्दी एक ही वृक्ष की दो शाखाएँ हैं और शौरसेनी प्राकृत और गौड़ी प्राकृत का पुराना गहरा रिश्ता है। यही कारण है कि विद्यापति जितने हिन्दी के कवि हैं उतने ही बांग्ला के।

प्रसिद्ध भाषाविद् डॉ॰ सुनीति कुमार चादुर्ज्या भारतीय साहित्य की मूलभूत पहचान के लिए संस्कृत, तमिल (या कोई भी द्रविड़ भाषा) के अध्ययन की सलाह देते हैं। वस्तुतः संस्कृत का सभी भारतीय भाषा–साहित्यों पर प्रभूत प्रभाव है। हिन्दी भाषा साहित्य का तो प्राण है संस्कृत भाषा–साहित्य। संस्कृत ग्रंथों के अनुवाद ने हिन्दी साहित्य को कथ्य की अनेक रश्मि–राशियाँ प्रदान की हैं। रामायण और महाभारत सैकड़ों हिन्दी–ग्रंथों की पृष्ठभूमि में हैं। कविता, नाटक, उपन्यास, कहानी, निबंध और अनेक समीक्षा–ग्रंथों को इन दो महाकाव्यों ने वस्तु–तत्त्व प्रदान किया है। उपनिषद् और पुराणों ने भी आधुनिक हिन्दी साहित्य को विषय प्रदान किए हैं। प्रसाद की कामायनी, मैथिलीशरण गुप्त का "दिवोदास" इस बात के प्रबल–प्रमाण हैं। यही नहीं श्रीमद्भागवत हिन्दी के सम्पूर्ण कृष्ण–भक्ति साहित्य (मध्ययुगीन और आधुनिक भी) का मूल उद्गम या स्रोत प्रमाणित किया जा सकता है। संस्कृत से हिन्दी अनुवाद का यह प्रभाव विश्वविद्यालयी शोध पर भी पड़ा है। पचासों शोध–ग्रंथ संस्कृत और हिन्दी तथा संस्कृत–रामायण और अन्य भारतीय भाषाओं की रामायण विषयों पर लिखे जा चुके हैं। यही नहीं संस्कृत की सांस्कृतिक विरासत को उजागर करने में दक्षिण भारतीय भाषाओं के साहित्य से परिचित कराने में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

इलैक्ट्रानिक मीडिया (दूरदर्शन आदि) ने हिन्दी में पर्याप्त काम किया है। इस तरह सांस्कृतिक प्रतिबिंबन की इस प्रक्रिया में संस्कृत तथा द्रविड़ भाषाओं से किए गये रूपांतरण और अनुवाद का वैशिष्ट्य रेखांकित होता है।

मुद्रण यंत्र का विकास अनुवाद–कला के विकास का मूल कारक है। बाइबिल के अनुवादों की श्रृंखला में अंग्रेजी–हिन्दी अनुवाद एक कड़ी बना। बाइबिल की अनेक कहानियों, साहित्य–सौन्दर्यमयी नीति कथाओं तथा दृष्टांतों के अनुवाद ने पाश्चात्य संस्कृति के गवाक्ष हमारे लिए खोले। बीसवीं शती के प्रारम्भ में ही हिन्दी में अंग्रेजी साहित्य से अनुवाद कार्य का सिलसिला शुरू हुआ। भारतेन्दु जी ने शेक्सपियर के नाटक "मर्चेंट आव वेनिस" का "वंशपुर का महाजन" शीर्षक से, पं. श्रीधर पाठक ने गोल्ड स्मिथ के "डिजर्टेड विलेज" का "ऊजड़ ग्राम", महावीर प्रसाद द्विवेदी ने बेकन के निबंधों का "बेकन विचार रत्नावली" लार्ड बोटॉन के "ब्राइडल नाइट" का "सोहागरात" शीर्षक से अनुवाद किया। तदुपरान्त अंग्रेजी हिन्दी अनुवादों का सिलसिला चल पड़ा। आज अंग्रेजी के अन्यान्य महत्त्वपूर्ण ग्रंथों–कविता, उपन्यास, कहानी, निबंध, आलोचना आदि से सम्बद्ध–का अनुवाद हो चुका है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भारतीय एवं भारतीयेतर भाषा–साहित्यों के अनुवाद ने सांस्कृतिक आदान–प्रदान का न केवल मार्ग प्रशस्त किया है वरन् विश्व संस्कृति की कड़ियाँ मजबूत की हैं। इसी संदर्भ में यह कहना भी समीचीन होगा कि भारतीय संस्कृति के जिस मूलभूत गुण "अनेकता में एकता" की बात अक्सर की जाती है, उसकी सिद्धि का मूल कारक अंतर्भाषिक अनुवाद ही है। अनुवाद के माध्यम से ही हम अहिन्दी प्रान्तों की संस्कृतियों से सुपरिचित हो रहे हैं, उन्हें आत्मसात कर रहे हैं। और इस सांस्कृतिक समन्वय की प्रक्रिया में हमारी पतवार बना है संस्कृत का साहित्य। वस्तुतः भारतीय संस्कृति की मूलचेतना संस्कृत में विद्यमान है और संस्कृत ही सभी भारतीय भाषाओं का मेरुदण्ड भी है।

अनुवाद का यह रथचक्र अब अंग्रेजी–हिन्दी के साथ ही अन्य देशों के भाषा–साहित्य की ओर भी घूम रहा है। यही कारण है कि बीसवीं शती के सातवें, आठवें और नवे दशक में रूसी, जर्मन, चीनी, अरबी और अफ्रीकी साहित्य के हिन्दी में अनेक अनुवाद हुए हैं। इस तरह अनुवाद की यह परम्परा विश्व संस्कृति के निर्माण की प्रयास–दिशा में गतिमान है। वस्तुतः अनुवाद एक संयोजन प्रक्रिया है। अनुवाद अन्तर्भाषिक सम्प्रेषण के माध्यम के रूप में विश्व के विभिन्न जनसमूहों को, देशों को सम्पृक्त करता है। कासा ग्रांदे के अनुसार "अनुवाद भाषाओं की नहीं वरन् संस्कृतियों की अदला–बदली है।" अतः कहना न होगा कि विश्व–संस्कृति के भौतिक, भावना–परक, बौद्धिक और आध्यात्मिक पहलुओं के विकास में अनुवाद एक समन्वयकारी अथवा संयोजनकारी प्रक्रिया के रूप में काम करता है। भाषा संस्कृति की अभिव्यक्ति का आधारभूत माध्यम होती है, अतः भाषान्तरण सांस्कृतिक तत्त्वों का भी अन्तरण होता है और यह अन्तरण ही सांस्कृतिक प्रतिबिम्बन की प्रक्रिया है।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक संदर्भों का अन्तरण

अनुवाद एक दुष्कर कार्य है। अनुवाद में मूलकृति की भाषिक संरचना, प्रकृति और शिल्प के रूपान्तरण की कठिनाई उतनी बड़ी नहीं होती जितनी बड़ी समस्या अनूदित कृति में अनुस्यूत सांस्कृतिक सन्दर्भों के भाषान्तरण की होती है। वस्तुतः सृजनात्मक साहित्य के अनुवाद में यह कठिनाई और भी बढ़ जाती है। एक प्रश्न सहज ही उठता है कि स्रोत भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों का लक्ष्य भाषा में अनुवाद कैसे हो? विचारों, अवधारणाओं का अनुवाद उतना दुष्कर नहीं है जितना उन विचारों, अवधारणाओं अथवा भावानुभूतियों से सम्बद्ध सांस्कृतिक सन्दर्भों का अनुवाद एक जुझारू समस्या है।

विविध भाषाओं में प्रस्तुत किए गए अन्तर अनुवादों से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य की अनुभूत्यात्मक संवेदनाओं में जहाँ पर्याप्त साम्य है, वहीं उन अनुभूतियों की विविध भाषिक अभिव्यक्तियों में पर्याप्त वैषम्य। प्रत्येक भाषा अपने विशिष्ट सांस्कृतिक प्रतीकों और सन्दर्भों से गर्भित होती है। संस्कृति किसी मानव समुदाय के संस्कारों, उसके आचार–विचारों, उसके जीवन–व्यापार और जीवन–दर्शन आदि विविध तत्त्वों से गृहीत अनुक्रियाओं का समेकित–समन्वित रूप है। यह मानवात्मा का भावोन्मुख तथा आचरणोन्मुख गुण है, जिसकी अभिव्यक्ति साहित्य, कला, धर्म, दर्शन आदि में नाना रूपों में होती है। संस्कृति देश कालातीत नहीं होती। देश काल सापेक्ष होती है। यही कारण है कि एक देश और प्रदेश की संस्कृति में भिन्नता दृष्टिगोचर होती है। इस विभिन्नता या अनेकता में एकता तथा सामंजस्य स्थापित करने तथा भाषा–भेद को पाटने में अनुवाद की विशिष्ट भूमिका है। वस्तुतः इसी अर्थ में अनुवाद को सांस्कृतिक सेतु कहा गया है जो भिन्न संस्कृतियों वाले मानव समुदायों में सामंजस्य तथा एकता स्थापित करने का गुरुतर कार्य करता है।

अनुवाद का इतिहास मानव सभ्यता के इतिहास की तरह प्राचीन है। विद्वानों ने 3000 ई.पू. से अनुवाद का इतिहास रेखांकित किया है। मिस्र की प्राचीन राजधानी से सम्बद्ध एलीफेंटाइना नामक द्वीप में दो भिन्न भाषाओं में उत्कीर्ण शिलालेख इस बात के प्रमाण हैं। ये प्रस्तर लगभग 3000 ई.पू. पुराने माने गए हैं। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि संसार में जब से भाषा साहित्य का विकास हुआ तभी से अनुवाद की परम्परा का सूत्रपात भी हो गया। वर्तमान शती में विश्व साहित्य की विकसित अवधारणा के कारण अनुवाद का विशिष्ट महत्त्व है। इसीलिए बीसवीं शती को अनुवाद का युग कहा जाता है। पॉल एंजिल ने लिखा है–

"As the world shrinks, the need for translation expands. It seems likely that, for the rest of the twentieth century each country will have, not one but two literatures: the one produced by its own writers, and the other translated from the world's languages. This secondary literature

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

will often have the most immediate and energizing effect on writers of the language into which it has been translated."[1]

अर्थात् "ज्यों–ज्यों विभिन्न मानव समुदायों की दूरियाँ कम हो रही हैं त्यों–त्यों अनुवाद की आवश्यकता का विकास हो रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में प्रत्येक देश में दो प्रकार का साहित्य होगा एक तो मूल साहित्य जो उस देश के रचनाकारों द्वारा सृजित होगा और दूसरा विश्व की अन्य भाषाओं से अनूदित साहित्य। अनूदित साहित्य लक्ष्य भाषा–साहित्यों पर विशेष प्रभाव डालेगा।" वस्तुतः पॉल एंजिल का यह कथन सत्य प्रतीत होता है। हिन्दी साहित्य इस बात का प्रमाण है। हिन्दी साहित्य के अधिकांश रचनाकार और उनकी कृतियाँ संस्कृत और अपभ्रंश की उन रचनाओं से दूर तक प्रभावित हैं जिनके अनुवाद हिन्दी में प्रस्तुत किए जा चुके हैं। यह कहना अतिशयोक्ति न होगी कि 'धम्मपद', 'गाथा सप्तशती', 'उमर खय्याम की रुबाइयाँ 'अरेबियन नाइट्स', 'मिस्ट्रीज ऑफ लन्दन', 'बाइबिल' तथा अरस्तू और गेटे आदि के ग्रन्थों के अनुवादों ने हिन्दी साहित्य को दूर तक प्रभावित किया है। "मिस्ट्रीज आफ लन्दन" के अनुवाद (लन्दन रहस्य) ने गोपाल राम गहमरी और बाबू देवकी नन्दन खत्री के उपन्यासों को गहराई से प्रभावित किया। खत्री जी के उपन्यास चन्द्रकांता और भूतनाथ जीवनी तथा अन्य तिलिस्मी उपन्यासों का कथ्य एवं शिल्प–विधि 'लन्दन रहस्य' से आक्रान्त हैं।

सृजनात्मक साहित्य में अन्तर्राष्ट्रीयता, मानवाधिकारों की संरक्षा, मानवतावाद और मानववाद सम्बन्धी अवधारणाओं के विकास ने अनुवाद के सैद्धान्तिक आयामों को नई गति और दिशा प्रदान की है। परिणामस्वरूप अनुवाद में सांस्कृतिक सन्दर्भों की खोज की ओर अनुवादकों और भाषाविदों का ध्यान विशेष रूप से पहुँचा है। अब तक अनुवाद में संस्कृति की भूमिका की ओर लोगों का ध्यान कम था, किन्तु अब अन्तर्राष्ट्रीयता और मानवतावादी दृष्टिकोण के विकास के कारण अनुवादकों का ध्यान स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा की उन सांस्कृतिक विशिष्टताओं के रेखांकन की ओर गया है जो अन्तर्राष्ट्रीय अथवा अन्तर–प्रान्तीय स्वभाव, भाईचारा, विभिन्न धर्मों–सम्प्रदायों, भाषाओं के लोगों के बीच सौहार्द्र और स्नेह सम्बन्धी सांस्कृतिक तत्त्वों के भाषान्तरण से सम्बद्ध हैं। वस्तुतः इस दृष्टि से स्रोत भाषा के सांस्कृतिक तत्त्वों का अनुवाद एक कठिन समस्या है। अनुवाद में सांस्कृतिक सन्दर्भों के रूपान्तरण के लिए अनुवाद को स्रोत भाषा–भाषियों की संस्कृति से भलीभाँति परिचित होना चाहिए। उसे ऐसा अनुवाद प्रस्तुत करना चाहिए जो मूल भाषा की सांस्कृतिक इकाइयों का लक्ष्य भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों के परिप्रेक्ष्य में सटीक हो। अनुवाद में प्रयास यह होना चाहिए कि लक्ष्य भाषा के पाठक न केवल कथ्य और शिल्प की दृष्टि से लाभान्वित हों वरन् सांस्कृतिक दृष्टि से भी मूल भाषा के पाठक आत्मसात्

1. Engle, Paul : Preface to contemporary French poetry (Edited by Donald Justice, 1965.)

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कर सकें।

संस्कृति शब्द की अनेक व्याख्याएँ की गई हैं। संस्कृति शब्द की व्युत्पत्ति के मूल में हैं मानव के संस्कार, जलवायु और पर्यावरण से रेखांकित उसका व्यवहार, उसका प्रेमात्मक सोच एवं दर्शन। कुल मिलाकर उसकी समग्र जीवन–दृष्टि और इसका नाना रूपात्मक आचरण, जो सभी प्रकार की कलाओं, दर्शन, साहित्य, ज्ञान–विज्ञान आदि की उत्पत्ति का मूल कारक है। वस्तुतः संस्कृति की जटिल संरचना में भूगोल, इतिहास, ललित कलाएँ, भाषा, साहित्य, शिल्प, ज्ञान–विज्ञान, धर्म–दर्शन, समाज, परम्पराएँ, रीति–रिवाजों और स्त्री–पुरुष सम्बन्ध तथा सभी मानवीय रिश्तों का सघन तंत्र है। यही नहीं संस्कृति का परिविस्तार व्यक्ति, परिवार, नगर, प्रान्त और अन्य देश सापेक्ष है अर्थात् संस्कृति शब्द व्यक्ति और घर–परिवार के साथ ही प्रदेश और देश–विदेश के सन्दर्भ में भी प्रयुक्त होता है। इस प्रकार संस्कृति शब्द सीमित सन्दर्भ के साथ ही साथ अत्यन्त व्यापक सन्दर्भ भी है। वस्तुतः इन्हीं व्यापक सन्दर्भों को दृष्टि में रखकर चीन के एक सुप्रसिद्ध अनुवादक गुओ मोरो ने लिखा है कि "अनुवादों के द्वारा हम विश्व की सांस्कृतिक विरासत से परिचित होते हैं।"[1] यही नहीं जे.वी., काजाग्रान्दे की इस धारणा "कि अनुवाद में अनुवादक भाषाओं को अनूदित नहीं करता वरन् संस्कृतियों को अनूदित करता है–" [2]से भी यही ध्वनि निकलती है।

अनुवाद का सांस्कृतिक सन्दर्भ भाषागत् अनुवादृयता का प्रश्न है क्योंकि एक भाषा में व्यक्तियों के अनुभवों का अंकन दूसरी भाषा से भिन्न तरीके से होता है और कभी कभी एक ही शब्द का परिविस्तार दो भाषाओं में भिन्न प्रकार से होता है। वैसी स्थिति में स्रोत भाषा के शब्दों के लिए लक्ष्य भाषा में समतुल्य शब्द उपलब्ध हो जाने पर भी मूल शब्द के सांस्कृतिक सन्दर्भ और परिविस्तार का अनुवाद पूरी तरह हो नहीं पाता। इस सम्बन्ध में ह्रर्ट जी. एलेक्जेण्डर[3] ने अंग्रेजी शब्द "बॉय" का उल्लेख किया है। उन्होंने लिखा है कि इस शब्द के लिए संसार की सभी भाषाओं में समतुल्य शब्द उपलब्ध हैं किन्तु एक भाषा में "बॉय" शब्द उन व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त होता है जो वयः सन्धि की बेला में हैं जवकि दूसरी भाषा में "बॉय" के लिए समतुल्य शब्द अधिक आयु वर्ग के लिए प्रयुक्त होता है। इस दृष्टि से "बॉय" शब्द का अनुवाद दूसरी भाषा में पूरी तरह संभव नहीं है। इसीलिए अनुवाद

1. Through translation we know the cultural heritage of the world wouro, Guo: On literary Translation, P. 125.
2. Golden Toury : Translation across cultures–
3. This is the question of translatability from one language into another. Since one language carbs experiences in a somewhat different way from another language, many of the terms used in the one will coincide precisely in their extensions to the nearest corresponding terms in the other.. Thus boy is a term which can readily find near equivalents in most Languages.. in one language the boy term may apply to individuals under the age of puberty, where as in another, the nearest corresponding term would include much older individuals. - Hubert G. Alexander

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

का सांस्कृतिक सन्दर्भ अनुवाद्यता का प्रश्न है।

अनुवाद के सन्दर्भ में संस्कृति का अर्थ उन जटिल भावानुभूतियों के समीकृत स्वरूप से है जो मानव समुदाय के दिन प्रतिदिन के जीवन को संचालित करती हैं और कालान्तर में सामाजिक संरचना, इतिहास, धर्म, परम्परा, रीति–रिवाजों आदि के निर्माण का कारण बनती हैं। संस्कृति की यही जटिल संरचना जन–साधारण और अभिजात्य वर्ग के जीवनचक्र को रेखांकित और संचालित करती है। संस्कृति, वस्तुतः विभिन्न समुदायों, जातियों, धार्मिक सम्प्रदायों के पारस्परिक अन्तः सम्बन्धों का जटिल ढाँचा है। यह किसी समाज अथवा समुदाय विशेष का दूसरे समाज अथवा समुदाय से होने वाली अनुक्रियाओं, सहसम्बन्धों का लेखा–जोखा भी है। दो समुदायों अथवा समाजों के पारस्परिक सम्बन्धों का प्रतिबिम्ब हमें उन समाजों द्वारा प्रयुक्त भाषाओं और उनके साहित्य में मिलता है। किसी साहित्य का सर्वोत्तम रूप उसके महाकाव्यों में परिलक्षित होता है। महाकाव्य किसी भाषा और संस्कृति के उदात्त तत्त्व हैं। इसलिए महाकाव्यों का अनुवाद स्रोत भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों के अनुवाद का महत्त्वपूर्ण उपादान है। महाकाव्य का अनुवाद उस देश के नायकों, महापुरुषों के चरित्र अर्थात् राष्ट्रीय और जातीय चरित्र, जीवन–मूल्यों, धारणाओं, विश्वासों, उदात्त भावानुभूतियों तथा चिरन्तन जीवन–समस्याओं को रेखांकित करता है। अतः महाकाव्यों का अनुवाद कठिन कार्य है क्योंकि यहाँ अनुवादक का दायित्व होता है कि वह स्रोत भाषा के सांस्कृतिक उपादानों को लक्ष्य भाषा में इस तरह अभिव्यक्त करे कि लक्ष्य भाषा के पाठक स्रोत भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों को आत्मसात् कर सकें। वस्तुतः संस्कृति के संदर्भ में अनुवाद लक्ष्य भाषा के पाठकों को स्रोत भाषा की सांस्कृतिक विरासत से परिचित कराना है। उदाहरण के लिए यदि ग्रीक भाषा के महाकाव्यों का अथवा नाटकों का अनुवाद किया जाए तो अनुवादक का फ़र्ज़ होगा कि वह यूनान की संस्कृति के मूल तत्त्वों से परिचित हो और उसकी मानववादी विचारधारा को अनुवाद में रूपायित करे। इसी तरह यदि भारतीय साहित्य का, महाकाव्यों का अनुवाद किया जाय तो हमें भारतीय संस्कृति की मूल चेतना धर्म, ईश्वर, मोक्ष, अमरत्व और शाश्वत जीवन सम्बन्धी विधारणाओं से परिचित होना लाज़िमी होगा।

साहित्य समाज का दर्पण है। इस कथन का अभिप्राय यही है कि साहित्य में सामाजिक यथार्थ के कुछ पहलुओं का प्रस्तुतीकरण होता है। प्रत्यक्षतः साहित्य एक ऐसी सामाजिक संस्था है जिसका माध्यम भाषा है। भाषा साहित्य निर्माण का उसी प्रकार उपादान कारण है जिस प्रकार स्थापत्य और मूर्ति कला का पत्थर, चित्र कला का रंग और संगीत का ध्वनि। वस्तुतः साहित्य एक भाषा विशेष की सांस्कृतिक विरासत है। भाषाओं की इस विरासत का उपभोग अनुवाद कराता है। ऐसे हजारों समुदाय इस पृथ्वी पर हैं, जिनमें सांस्कृतिक आदान–प्रदान अनुवाद के माध्यम से हुआ है और हो रहा है। प्रसिद्ध भाषाविद् यूजीन ए. नीडा ने अनुवाद के तीन उपादान माने हैं–भाषा शास्त्र (व्याकरण), भाषा विज्ञान

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

और समाज भाषिकी। इनमें 'समाज भाषिकी' अनुवाद की नवीनतम प्रविधि है। यदि हम संस्कृति को मानव–व्यवहार और मानव–आचरण के परिविस्तार के रूप में देखते हैं तो संस्कृति का सम्बन्ध उस समुदाय विशेष की भाषा से जुड़ जाता है जो अपने व्यवहार में और आचरण में उस भाषा का प्रयोग करता है और यही 'समाज भाषिकी' का कच्चा द्रव्य है। अनुवाद के सन्दर्भ में 'समाज भाषिकी' का लक्ष्य होगा स्रोत भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों से सम्बद्ध शब्दों का चयन, मीमांसा और अनुवाद। सांस्कृतिक सन्दर्भ गर्भित शब्दावली के अनुवाद में अनुवादक को लक्ष्य भाषा से समतुल्य शब्दों की खोज में अत्यधिक सावधानी बरतनी होती है। सांस्कृतिक शब्दावली साधारणतः पहचान में नहीं आती। वह अक्सर स्रोत भाषा की संरचना में गुँथी होती है। इस शब्दावली के विश्लेषणं–विवेचन और अनुवाद के लिए अनुवादक में अपेक्षित योग्यता होनी चाहिए।

भाषा और संस्कृति का सगुम्फन और अंतःसंबंध अनुवादक के सामने कठिनाइयाँ उत्पन्न करता है। डेलहिम्स की धारणा है कि सांस्कृतिक शब्दावली भाषा प्रयोगों में सहज ही नहीं आ जाती वरन् सार्थक श्रम करके चयनित रूप में प्रयुक्त की जाती है। संस्कृति और भाषा के अंतःसंबंध को लेकर विद्वानों में मतभेद भी है। पीटर न्यूमार्क मानते हैं कि संस्कृति भाषा का संघटक तत्त्व नहीं है, और न ही भाषा संस्कृति के सभी तत्त्वों को अपने में समेटे रहती है। नीडा इससे भिन्न मत रखते हैं। उनके अनुसार संस्कृति भाषा का अनिवार्य अंश है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि भाषा और संस्कृति के सह–सम्बन्ध के बारे में विद्वानों में भले ही मतैक्य न हो किन्तु यह निर्विवाद रूप से स्वीकार्य है कि भाषा की संस्कृति–सम्पृक्तार्थ शब्दावली अनुवादक के लिए समस्या पैदा करती है। भाषा की सामान्य शब्दावली का अनुवाद संस्कृतिनिष्ठ शब्दावली की तुलना में निश्चित रूप से सरल है और संस्कृतिनिष्ठ शब्दावली का कोरा शब्दानुवाद भी समस्या का सर्वोत्तम हल नहीं है। यही कारण है कि सांस्कृतिक सन्दर्भ गर्भित शब्दों के शब्दानुवाद या तो भ्रामक हुए हैं या हास्यास्पद। उदाहरण के लिए अंग्रेजी में पत्नी को "स्वीट हार्ट", "हनी", "चेरी" आदि कहकर सम्बोधित करने की प्रथा है। अगर इन शब्दों का हिन्दी में अनुवाद किया जाए तो समस्या खड़ी होगी क्योंकि हमारी संस्कृति में पत्नी के लिए इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग नहीं होता। हम कहते हैं "देवी जी", "बच्चों की माँ", "धर्मपत्नी", "पत्नी" आदि। स्पष्ट है कि हिन्दी–अंग्रेजी के इन शब्दों का अंग्रेजी से हिन्दी में अथवा हिन्दी से अंग्रेजी में किया गया शब्दानुवाद कृत्रिम प्रतीत होगा क्योंकि स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा में सांस्कृतिक दूरियाँ हैं। वस्तुतः इस समस्या का एक ही निदान हो सकता है कि स्रोत भाषा की सांस्कृतिक शब्दावली को लक्ष्य भाषा की संस्कृति के अनुरूप बदल लेना चाहिए और समतुल्य अभिव्यक्तियों की खोज करनी चाहिए। इस संबंध में नीडा का सुझाव है कि अनुवादक को मानव विज्ञान का ज्ञान होना चाहिए और उसे समतुल्यता के सिद्धान्तों से भली–भाँति परिचित होना चाहिए। नीडा की दृष्टि में अनुवाद सम्बन्धी सबसे बड़ी भूलें स्रोत भाषा

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

के सांस्कृतिक सन्दर्भों का सही अनुवाद न हो पाना ही है। नीडा का मत है कि अनुवादक को बहुत सारी टीकाओं, शब्दकोशों, मुहावरे और लोकोक्तियों के कोशों आदि से सहायता लेनी चाहिए। यही नहीं, उसे सांस्कृतिक नृविज्ञान तथा भौतिक संस्कृति से भी परिचित होना चाहिए अर्थात् लोगों के खान–पान, रहन–सहन, वेशभूषा, सामाजिक व्यवहार आदि की जानकारी अनुवादक को कर लेनी चाहिए। स्रोत भाषा–भाषी लोगों के धार्मिक विश्वास और अन्धविश्वास, उनका व्यवहार, आचरण, खान–पान, वेश–भूषा आदि से सम्बन्धित शब्दावली के सही अनुवाद के लिए नीडा सांस्कृतिक नृविज्ञान का अध्ययन आवश्यक मानते हैं।

सामान्यतः भाषा को संस्कृति का संघटक तत्त्व माना जाता है। इसलिए अर्थ सम्बन्धी समस्याओं का हल करने के लिए स्रोत भाषा के सांस्कृतिक सन्दर्भों का प्रामाणिक ज्ञान आवश्यक है। खेद है कि इस सम्बन्ध में अनुवाद पर कम विचार किया गया है। प्राचीन साहित्य के अनुवादकों ने सांस्कृतिक सन्दर्भों के अनुवाद की कठिनाई इतनी अधिक महसूस नहीं की क्योंकि प्राचीन साहित्य का अनुवाद सांस्कृतिक दृष्टि से दूरी वाली भाषाओं में कम हुआ। 'क्लैसिक्स' के अनुवाद सांस्कृतिक दृष्टि से निकटतम भाषाओं में ही अधिक प्रस्तुत किए गए, जैसे कि ग्रीक से रोमन में, संस्कृत से हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में। इन भाषाओं में सांस्कृतिक एकता रही है। अतः सांस्कृतिक सन्दर्भों के अनुवाद की कठिनाई यहाँ उतनी गहराई से महसूस नहीं की गई। ग्रीक और रोमन साहित्य से प्रस्तुत किए गए अनुवाद यूरोपीय भाषाओं में इसलिए कठिन नहीं हैं क्योंकि समग्र यूरोपीय भाषाओं के मूल में ग्रीक और रोमन भाषाओं के सांस्कृतिक तत्त्व हैं। संस्कृत से हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में प्रस्तुत किए गए अनुवादों में सांस्कृतिक सन्दर्भों के अनुवाद की कठिनाई और आवश्यकता भी इतनी अधिक महसूस नहीं की गई क्योंकि भारतीय संस्कृति के मूल तत्त्व संस्कृत भाषा में गहराई से बद्ध मूल रहे हैं और सभी भारतीय भाषाएँ संस्कृत से अनुप्राणित हैं। वस्तुतः यह कठिनाई अन्तर्राष्ट्रीय अनुवाद के सन्दर्भ में खड़ी होती है। जब हम हिन्दी के किसी ग्रन्थ का अनुवाद डच, फ्रांसीसी अथवा अंग्रेजी में प्रस्तुत करते हैं तब यह कठिनाई सामने आती है। इस सन्दर्भ में प्रेमचन्द की कहानी "कफन" के अनुवाद विचारणीय हैं। कफन के अनुवाद निम्न चार संग्रहों में प्रस्तुत किए गए हैं–

1. Short stories by Prem Chand 1948 - Guru Dayal Malik
2. A handful of wheat and other stories - 1955 - Prakash Chand Gupta.
3. The world of Prem Chand, 1969 - David Rubin
4. Twenty four stories by Prem Chand - Nandini Nopeni & P. Lal

उक्त चारों संग्रहों में 'कफन' कहानी में प्रयुक्त सांस्कृतिक शब्द–चमार, बनिया, महाजन, पत्तल, पूरी, असली घी, कुल्हड़, चिखोना आदि के अनुवाद का प्रयास किया गया है। मलिक ने रोमन लिपि में Chamar लिखा है और फुट नोट में आशय व्यक्त किया है। गुप्त ने चमार को Cobbler कहा है जो मोची भी होता है। लाल ने चमार को Tanner

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

कहा है जो चर्मकार भी होता है। रूविन ने चमार को "Untouchable Leather–worker" से अनूदित किया है। इनमें से "चमार" के लिए अंग्रेजी का कौन–सा शब्द समतुल्य मान लिया जाय? कठिनाई उपस्थित होती है। इसी तरह कुल्हड़ शब्द का अनुवाद मलिक ने 'Wine glass', गुप्त ने 'cup' रूविन ने 'Jug' लाल ने 'Clay cups' किया है जबकि 'earthen cup' अधिक समतुल्य प्रतीत होता है। कुल मिलाकर कहना यह है कि हिन्दी के उक्त सांस्कृतिक शब्दों का अंग्रेजी में अनुवाद एक समस्या है।

मूलतः शब्द भाषागत सांस्कृतिक प्रतीक होते हैं। अतः अनुवादक के लिए आवश्यक है कि वह स्रोत भाषा और लक्ष्य भाषा दोनों के सांस्कृतिक सन्दर्भों से भली–भाँति परिचित हो। इस सन्दर्भ में हम संस्कृतिमूलक शब्दों को मोटे तौर पर निम्न घटकों में विभाजित कर सकते हैं ताकि संस्कृति गर्भित शब्दों के सही अर्थ पकड़ में आ सकें।

1. पर्यावरण मूलक शब्दावलीः पर्यावरणमूलक शब्द किसी देश की भौगोलिक परिस्थितियों से रेखांकित होते हैं। स्रोत भाषा की पर्यावरणमूलक शब्दावली का परिज्ञान अनुवादक को होना चाहिए। नीडा ने इस सम्बन्ध में बाइबिल के अनुवाद में हुई भूलों का उल्लेख किया है। बाइबिल में 'Fig tree', 'New leaves', 'Rain', 'Desert', 'River' आदि शब्द विशिष्ट अर्थों के द्योतक हैं क्योंकि इन शब्दों का धर्म–संस्कृति से गहरा सम्बन्ध है। अधिकांश अनुवादक इन शब्दों के लिए सही समतुल्यों का प्रयोग नहीं कर पाए हैं। साहित्य से अन्य उदाहरण भी लिए जा सकते हैं। अंग्रेजी की स्वच्छंदतावादी काव्यधारा के कवियों ने 'Autumn', 'Spring' अथवा 'Winter' शब्दों का प्रयोग अनेक बार किया है। ये शब्द भौगोलिक पर्यावरणमूलक हैं। वस्तुतः लंदन में 'Autumn' वही नहीं है जो भारत में शरत् है। इसी तरह 'Spring' वसंत का और 'Winter' शीत का पूर्ण समतुल्य नहीं है। कारण दोनों देशों का भौगोलिक अंतर है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को चाहिए कि वह मूल शब्द को लक्ष्य भाषा की लिपि में यथावत् लिख दे और पाद–टिप्पणी में उसका आशय स्पष्ट कर दे।

2. भौतिक संस्कृतिमूलक शब्दावलीः भोजन, वस्त्र, मकान, परिवहन और संचार के साधन आदि से जुड़े हुए शब्द इस कोटि में रखे जा सकते हैं। उनके अनुवाद में भी कठिनाई होती है। इस सन्दर्भ में भोजन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण घटक हैं। अंग्रेजी के चार शब्द 'Break–fast', 'Lunch', 'Supper' और 'Dinner' के लिए हिन्दी में समतुल्य शब्द नहीं हैं, "नाश्ता", "कलेवा" भोजन आदि शब्द उक्त अंग्रेजी शब्दों के पूर्ण अर्थ को ध्वनित नहीं करते। हिन्दी का गुलाब जामुन, खीर, दही बड़ा, चपाती आदि के लिए अंग्रेजी में शब्द ढूँढ़ पाना संभव नहीं लगता। इसी तरह अंग्रेजी की 'Fruit cream', फ्रेंच की 'Fruit charlotte' आदि के लिए हिन्दी में शब्द नहीं हैं।

वस्त्रों सम्बन्धी नामों के अनुवाद में भी कठिनाई आती है। हिन्दुस्तानी धोती और साड़ी, अंगरखा, पगड़ी आदि के लिए अंग्रेजी में तथा 'Trousers' और 'Skirt',

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

'Helmet', 'Nighty' आदि के लिए हिन्दी में शब्द ढूँढ़ पाना मुश्किल है। इसी तरह मकानों से सम्बन्धित नाम–कोठी, झोपड़ी, घरौंदा, बसेरा, झुग्गी, पण्डाल आदि अंग्रेजी के 'Bunglow' Pelazzo (Large house), Chamber Cell, Living room, Saloon के लिए समतुल्य अभिव्यक्तियाँ ढूँढ़ना मुश्किल है। अमेरिकन अंग्रेजी में कार के लिए छब्बीस शब्द हैं, हिन्दी में एक ही। अंतर्राष्ट्रीयता के विकास से अब परिवहन के साधनों के नाम अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अनायास ही स्वीकृत हो गए हैं, जैसे बस, कार, जम्बोजेट, एयरबस आदि मूल रूप में ही लिखे जाने लगे हैं। इसी प्रकार वनस्पति सम्बन्धी नामों के अनुवाद में भी कठिनाई उपस्थित होती है।

सामाजिक संस्कृति : सामाजिक संस्कृति से सम्बद्ध शब्दावली के अनुवाद में समतुल्य शब्दों को खोज पाना कठिन है। The people, The common people, The masses, The working class, आदि शब्दों के समानान्तर समतुल्य शब्द नहीं मिलते। इसी प्रकार खेलों के नाम Cricket, Hockey, Tennis, Football आदि, हिन्दी में गिल्ली डण्डा, कबड्डी, चौपड़ आदि के लिए समतुल्यं शब्द ढूँढ़ पाना मुश्किल है। अतः आवश्यक हो गया है कि इन शब्दों का अनुवाद न किया जाए और इन्हें यथावत् ग्रहण कर लिया जाय और ऐसा किया भी गया है।

धार्मिक संस्कृति : हर धर्म की एक विशिष्ट पारिभाषिक शब्दावली होती है। अतः उसके अनुवाद की कठिनाई भी विशिष्ट है। धर्म एक नाजुक मसला भी है। अतः धार्मिक साहित्य के अनुवाद में अनुवादक को अत्यधिक सतर्क रहना पड़ता है ताकि किसी विशिष्ट धार्मिक समुदाय की भावनाओं को ठेस न पहुँचे। हिन्दू या वैदिक धर्म की शब्दावली कर्म, धर्म, ज्ञान, मोक्ष, निराकार, साकार, अद्वैत, विशिष्टाद्वैत आदि के लिए दूसरी भाषा में समतुल्य शब्द ढूँढ़ना मुश्किल काम है। अनुवादक मात्र यही कर सकता है कि वह मूल शब्दों को यथावत् प्रस्तुत करे और पाद–टिप्पणी में उनका अर्थ स्पष्ट करे।

भाषिक संस्कृति : प्रत्येक भाषा की अपनी सांस्कृतिक अस्मिता होती है और भाषा की विविध प्रयुक्तियों से समुदाय विशेष की संस्कृति रेखांकित होती है। एक ही भाषा की भिन्न प्रयुक्तियों (Registers) में शब्दों का आशय बदल जाता है। उदाहरण के लिए हिन्दी का ही शब्द 'बाई' लें। बाई शब्द उत्तर प्रदेश (लखनऊ, आगरा, कानपुर आदि) में दुराचारिणी स्त्रियों अथवा कोठेवालियों (वेश्याओं) के अर्थ में प्रयुक्त होता है किन्तु यही "बाई" शब्द राजस्थान और म.प्र. में स्त्रियों के लिए प्रयुक्त होने पर सम्मानसूचक बन जाता है। इसी तरह उत्तर प्रदेश में "राँड़" शब्द विधवा स्त्री के लिए प्रयुक्त होता है। राजस्थान में "राँड़" वेश्या के अर्थ में प्रयुक्त होता है। इन उदाहरणों से यह बात स्पष्ट है कि एक ही भाषा का शब्द स्थान–भेद के कारण अर्थ–भेद का द्योतक हो जाता है। इस तरह भाषा–प्रयोग संस्कृति को रेखांकित करते हैं और अनुवादक के लिए कठिनाई उपस्थित करते हैं।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समग्रतः अनुवाद में सांस्कृतिक सन्दर्भों का रेखांकन वहुआयामी है और उनका अनुवाद दुरूह। सही अनुवादक का लक्ष्य हमेशा ही लक्ष्य भाषा के पाठक (Target readership) होते हैं। अतः अनुवादक को दोनों भाषाओं–स्रोत और लक्ष्य–पर समान अधिकार तो होना ही चाहिए, साथ ही उसे दोनों भाषाओं से जुड़ी संस्कृतियों का भी विशिष्ट ज्ञान होना चाहिए, तभी वह सफल और सही अनुवाद कर सकता है। वस्तुतः सांस्कृतिक संदर्भों से गर्भित साहित्य का अनुवाद एक दुरूह काम है। इसमें अनुवादक को पर्याप्त चयन, संशोधन, परिमार्जन, छान–बीन, प्रत्यर्पण और पुनरुत्पादन करना होता है। इस संबंध में जार्ज स्टेनर ने ठीक ही कहा है–

"The translator invades, extracts and brings home, and finally undertakes the act of restitution."

भाषाओं के संस्कृतिमूलक तत्त्वों का अन्तरण

महाकवि गोस्वामी तुलसीदास की एक पंक्ति है––

"गिरा अरथ जल बीचि सम, कहिअत भिन्न न भिन्न।"

वाणी और अर्थ अर्थात् शब्द और अर्थ के सह–संबंध को रेखांकित करते हुए गोस्वामी जी उनकी अभिन्नता पर बल देते हैं। जल और बीचि अर्थात् जलराशि और लहरें मात्र कहने भर को भिन्न होती हैं परन्तु उन्हें सायास भी एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। वस्तुतः जिस तरह शब्द और अर्थ अभिन्न हैं और एक दूसरे से पूर्णतः सम्पृक्त, उसी तरह शब्दार्थ समाज और संस्कृति से सम्पृक्त होता है। शब्द और उसके अर्थ का अर्थात् भाषा का समाज से गहरा ताल्लुक होता है। भाषा विज्ञान की शाखा समाज भाषिकी (सोस्यो लिंग्विस्टिक्स) में भाषायी यूनिटों के आधार पर प्रयोक्ता समाज की संस्कृति के रेखांकन का उपक्रम होता है। एक ही भाषा भिन्न समाजों/समुदायों में प्रयोग के आधार पर भिन्न रूप धारण कर लेती है जो उसकी प्रयुक्तियाँ (रजिस्टर्स) कहलाती हैं। हमारी अनुभूतियाँ, हमारे अनुभव, हमारा सम्पूर्ण चिंतनात्मक व्यापार और हमारी संवेदनाएँ भिन्न भाषाओं में भिन्न प्रकार से व्यक्त होती हैं। यही कारण है कि मनुष्य की अनुभूतियाँ, उसका अनुभव संसार और उसका क्रिया–व्यापार ही भिन्न परिवेशों में भिन्न मानदण्डों के आधार पर भिन्न संस्कृतियों का रूप धारण करता है। संस्कृति = (सम् + कृ + क्तिन् + सुट्) व्यक्ति–चेतना की सम्यक् क्रियाशीलता का सामाजिक तथा सामासिक रूप हैं।[1] कभी–कभी व्यक्ति चेतना अपने उत्कर्ष तथा ऊर्जा के फलस्वरूप समाज–चेतना पर आच्छादित हो जाती है। ऐसा तब होता है जब कोई बड़ा मनीषी, दार्शनिक, चिंतक, महर्षि, समाज सुधारक, धर्म प्रवर्तक अथवा युगपुरुष समाज को विशेष दिशा में गतिशील करने में समर्थ होता है। बुद्ध, शंकर, तुलसी, गांधी ऐसे ही युग पुरुष थे। व्यक्ति में जो सर्वश्रेष्ठ है जब वह

1. डा. शिव नन्दन प्रसाद के आलेख से

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सामाजीकृत होता है तब संस्कृति के तत्त्व रूपायित होते हैं।

विचार वैयक्तिक प्रक्रिया है। जागरूक एवं संवेदनशील व्यक्ति के मन में ही विचार उत्पन्न होते हैं। विचारों का भावान्तरण संवेदना (सेन्सिविलिटी) का निर्माण करता है और संवेदनाओं तथा चिंताधाराओं का संश्लेष भाषा के माध्यम से सामाजीकृत होता है। इस तरह व्यक्ति और व्यक्तियों की चिंतनधारा, भावधारा, समाज द्वारा स्वीकृत होने पर, समाज द्वारा अंगीकृत होने पर समाज–चेतना बनती है और सामाजिक संस्कृति का रूप धारण करती है तथा साहित्य और कलाएँ इस सामाजिक संस्कृति की अभिव्यक्ति के प्रमुख साधन बनते हैं। इस तरह संस्कृति के तत्त्वों के निर्माण और अभिव्यक्ति की प्रक्रिया में भाषा महत्त्वपूर्ण उपादान होती है। वस्तुतः भाषा में दो प्रकार का शब्द–विधान होता है। एक सामान्य और दूसरा विशिष्ट अर्थात् संस्कृति गर्भित शब्द विधान। इस भाषायी संस्कृति गर्भित शब्द विधान का अनुवाद मुश्किल काम भी है और अनुवाद में संस्कृतियों की पहचान का मूल कारक भी।

मुक्तिबोध ने "एक साहित्यिक की डायरी" में लिखा है–– "भाषा सामाजिक निधि है। शब्द के पीछे अर्थ परम्परा है। ये अर्थ जीवनानुभव से जुड़े हुए हैं।"[1] भाषा का एक दूसरा कार्य भी है। वह है उसकी अनुभावन प्रक्रिया अर्थात् भाषा अनुभव का स्रोत है, मात्र अभिव्यक्ति का साधन ही नहीं। भाषा मनुष्य की अनुभूति को रेखांकित, प्रकाशित ही नहीं करती, वरन् उसे विकसित भी करती है। उसका समूचा आचार–व्यवहार, क्रिया–प्रतिक्रिया, उसका चिन्तन, उसका भावावेग, उसकी भावानुभूतियाँ और संवेदनाएँ सभी भाषा में अभिव्यक्ति और अर्थ पाती हैं। यही कारण है कि आधुनिक काल में भाषा को एक सामाजिक संस्था के रूप में स्वीकृति मिली है। भाषा–विज्ञान में "समाज–भाषिकी" नामक भाषा–अध्ययन की प्रणाली का विकास भाषा की इसी सामाजिकता और सांस्कृतिकता के रेखांकन हेतु हुआ है। अनुवाद की प्रक्रिया में स्रोत भाषा की भाषिक अभिव्यक्तियों के लिए लक्ष्य भाषा में समानान्तर और समकक्ष शब्दावली का चयन इसीलिए कठिन होता है क्योंकि मूलभाषा समुदाय विशेष के प्रयोक्ताओं की सामाजिकता और सांस्कृतिकता की संवाहक होती है। समाज भाषा विज्ञान की यह मान्यता है कि मनुष्य के अस्तित्त्व को सामाजिक स्थितियाँ और समाज में उसकी भूमिकाएँ निर्धारित करती हैं। समाज के प्रत्येक सदस्य की भूमिका उसकी सामाजिक स्थितियों के सन्दर्भ में ही रेखांकित होती है। एक ही व्यक्ति अनेक अवसरों पर घर में, बाजार में, दफ़्तर में, गोष्ठी में एक ही भाषा के भिन्न–भिन्न रूपों का प्रयोग करता है। और भाषा के ये प्रयोग, जो अवसर और सन्दर्भ सापेक्ष हैं, भाषा की प्रयुक्तियों के रूप में विश्लेषित किए जाते हैं। अनुवादक के लिए इन प्रयुक्तियों का अनुवाद भी दुष्कर होता है। प्रसिद्ध भाषा–विद् सस्यूर भाषा को समाज सापेक्ष प्रतीक व्यवस्था मानते हैं। बूल्मफील्ड ने लिखा है "भाषा–समुदाय व्यक्तियों का एक ऐसा समुदाय

1. मुक्तिबोध : एक साहित्यिक की डायरी, पृ. 26

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

है। जिसके सदस्य समान वाक् संकेतों का प्रयोग करते हैं। वाक् संकेतों की समानता समुदाय में भाषा की एकरूपता का भ्रम उत्पन्न कर सकती है किन्तु एक समुदाय के कोई भी दो सदस्य समान रूप से नहीं बोलते। व्यक्ति विशेष भी विभिन्न अवसरों पर विभिन्न रूपों में बोलता है।[1] वस्तुतः कार्यक्षेत्र और कार्य सम्बन्ध एक होने पर भी यदि प्रसंग बदल जाए तो भाषा भी बदल जाती है। इस तरह भाषा केवल संकल्पना में ही एक रूपी है। व्यवहार के स्तर पर यह भिन्न–भिन्न सन्दर्भों में परिवर्तित होती रहती है और उसकी यह बहुरूपकता सामाजिक सन्दर्भों से सम्पृक्त होती है। इस तरह भाषायी विविधता सामाजिक स्थिंतियों को संकेतित करती है।[2]

समाज भाषिकी की अवधारणा के अनुसार भाषिक सम्प्रेषण सामाजिक और सांस्कृतिक सूचनाओं से युक्त होता है। गम्बर्ज के अनुसार सामाजिक संरचना भाषा–प्रयोगों को सुनिश्चित करती है। इस तरह भाषा संस्कृति को भी रेखांकित करती है।

भाषा यद्यपि संस्कृति को रेखांकित करती है तथापि भाषा संस्कृति का पर्याय नहीं है। डॉ. रामविलास शर्मा ने लिखा है "भाषा स्वयं संस्कृति नहीं है अपितु वह संस्कृति का वाहन मात्र है।"[3] भाषा के सांस्कृतिक स्वरूप के सम्बन्ध में यह भी कहा जा सकता है कि प्रत्येक भाषा का जातीय चरित्र होता है। उसका अपना बिम्ब विधान, प्रतीक विधान तथा मिथकीय विशेषताएँ होती हैं। वह प्रयोक्ता समाज की आस्था और विश्वासों को अभिव्यक्ति देती है। समग्रतः भाषा किसी भी समाज की संस्कृति की संवाहिका होती है। इसीलिए मूल भाषा से लक्ष्य भाषा में अनुवाद का कर्म भाषायी संस्कृंति के अन्तरण का कार्य माना जाता है।

संस्कृतियों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया में भाषा–भेद की खाईं को अनुवाद ही पाटता है। वैचारिक और अनुभूत्यात्मक मानवीय एकता की स्थापना में अनुवाद की अहम् भूमिका है। आज अनुवाद अपरिहार्य है क्योंकि यह औद्योगिक और वैज्ञानिक सभ्यता के प्रसार और नव सांस्कृतिकीकरण का युग है। यद्यपि अनुवाद परम्परा के प्रारम्भिक विकास में धार्मिक और वैचारिक कारण ही थे तथापि आज अनुवाद के क्षेत्र में ज्ञान–विज्ञान की सभी शाखाएँ आ गयी हैं। अनुवाद की परम्परा का सर्वाधिक विकास यूनान और रोम में हुआ। अरब में भी अनुवाद की विकसित परम्परा रही है। अरबी में भारत के संस्कृत साहित्य–ग्रन्थों के साथ ही साथ ज्योतिष, रेखागणित, आयुर्विज्ञान से सम्बन्धित ग्रन्थों का अनुवाद बहुत पहले हुआ। कहा जाता है कि यूरोप पर भारतीय संस्कृति का प्रभाव अरबी अनुवादों के माध्यम से ज्यादा पड़ा है। प्राचीन काल में विधिवत् अनुवाद की परम्परा ईसवी सन् से लगभग 250 वर्ष पूर्व से मानी जा सकती है, जब होमर के ग्रन्थ "ओडिसी" का लैटिन भाषा में अनुवाद लिवियस एन्ट्रोनिकस ने किया। यूनानी भाषा से लैटिन में अनुवाद करने वालों

1. एल. ब्लूमफील्ड, लैंग्वेज
2. आर.एन.श्रीवास्तव, द सोशलॉजी ऑफ फंक्शनल हिन्दी
3. डॉ. रामविलास शर्मा, भाषा और समाज, पृ. 27

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

में सिसरो का नाम अग्रगण्य है। कहा जाता है कि जैरोम ने बाइबिल का सर्वप्रथम व्यवस्थित और वैज्ञानिक भावानुवाद प्रस्तुत किया जिसका धर्मांध व्यक्तियों ने विरोध भी किया। यूनानी साहित्य–संस्कृति की समृद्ध परम्परा का प्रभाव सारे यूरोप और एशियाई देशों पर अनुवाद के माध्यम से ही पड़ा। वस्तुतः साहित्यिक अनुवाद एक भाषा की संस्कृति को दूसरी भाषा में बोधगम्य बनाता है। इस तरह अनुवाद दो भाषाओं में निहित संस्कृतियों में सामासिकता स्थापित करने का एक संकल्पशील प्रयास है।

भाषायीं संस्कृति के अंकन की प्रक्रिया में हम हिन्दीतर भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी भाषा के अनुवादों को मोटे तौर पर दो वर्गों में बाँट सकते हैं। एक वर्ग उन अनुवादकों का है जो स्रोत भाषा की कृति में निहित भाषायी संस्कृति को आत्मसात करके लक्ष्य भाषा की संस्कृति और परिवेश के समनुरूप कर लेते हैं, जैसे कन्नड़ में श्री बसप्पा शास्त्री ने शेक्सपियर के "ओथैलो" का "शूरसेन चरित्र" नाम से तथा श्री कण्ठ गौड़ ने "मैक बैथ" का "प्रताप रुद्रदेव" नाम से, हिन्दी में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने "मर्चेंट आफ वेनिस" का "वंशपुर का महाजन" नाम से अनुवाद किया है। यहाँ भारतेन्दु जी ने मूल पात्रों के नामों का भारतीयकरण भी कर दिया है। पोर्शिया, पुरुश्री, "एंटोनियो" "अनंत" "बैसेनियो" "बसन्त" के नाम से रूपान्तरित किए गए हैं। दूसरे वर्ग में वे अनुवादक आते हैं जो मूलभाषा की कृति की संस्कृति को संरक्षित–सुरक्षित रखते हैं। उनका प्रयास होता है कि स्रोत भाषा की कृति में समाहित सांस्कृतिक परिवेश का परिचय लक्ष्य भाषा के पाठकों को यथावत् कराया जाए। वस्तुतः कुछ पाठक स्रोत भाषा की कृति की कथा से ही परिचित नहीं होना चाहते वरन् देश–काल–परिवेश–संस्कृति, आचार–विचार जीवन–दर्शन, मूल्य और मानदण्डों से भी परिचित होना चाहते हैं। ऐसे पाठकों को लक्षित करके प्रस्तुत किया जाने वाला अनुवाद दुस्साध्य कर्म है किन्तु यह अनुवादक का महत्त्वपूर्ण दायित्व भी है। क्या प्रसाद जी की "गुण्डा" कहानी के नायक नन्हकूसिंह को उसके परिवेश और सांस्कृतिक चेतना से हटाकर समझा जा सकता है? क्या प्रसाद जी की "कामायनी" को भारतीय संस्कृति की मूलचेतना को छोड़कर अनूदित किया जा सकता है।

यह एक निर्विवाद तथ्य है कि सांस्कृतिक सन्दर्भों अथवा संस्कृति के भाषायी तत्त्वों का अनुवाद अनुवादक के सामने एक चुनौती होती है। अनूदित कृति में किसी जाति–विशेष की सामाजिक–धार्मिक संरचना का जटिल रूप होता है और मूल कृति की भाषायी संस्कृति लक्ष्य भाषा की संस्कृति से भिन्न होती है। रीति–रिवाजों, मूल्य–मान्यताओं, परम्पराओं, विश्वासों, वेशभूषा आदि अनेक ऐसे सांस्कृतिक घटक हैं, जिन्हें अनूदित करते समय लक्ष्य भाषा में समतुल्य अभिव्यक्तियाँ खोज पाना अति कठिन होता है। "वैयियङ.गुल" उपन्यास तेलुगु संस्कृति का महाकाव्य माना जाता है। उसमें चित्रित वेशभूषा, पर्व त्यौहार, धार्मिक रीति–रिवाज और परम्पराओं का चित्रण आन्ध्र संस्कृति का प्रामाणिक आधार उपस्थित करता है। इस उपन्यास में ब्रिटिश शासन में

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सांस्कृतिक संक्रमण से गुजरते हुए भारत के अन्तर्विराधों का चित्रण है। श्री पी.वी. नरसिम्हाराव ने इसका संक्षिप्त हिन्दीं अनुवाद प्रस्तुत किया है। उन्होंने वहुत–सी अन्तर्कथाओं को छोड़ दिया है और जिन तेलुगु शब्दों के लिए हिन्दी में समानार्थी शब्द नहीं मिल सके हैं, वहाँ पाद टिप्पणियों से आशय स्पष्ट किया है। उनके द्वारा प्रयुक्त हिन्दी पर्याय कहीं–कहीं वड़े सार्थक बन पड़े हैं जैसे पात्र "पसरिक" के लिए "हरिया" का प्रयोग उसे अपनी जाति का प्रतिनिधि बना देता हैं। लोकोक्तियों, मुहावरों के अनुवाद का प्रयास भी किया गया है। लोकोक्तियाँ और मुहावरे भाषा की संरचनात्मकता के ही प्रतीक नही होते वरन् भाषायी संस्कृति के भी तत्त्व होते हैं। कुल मिलाकर यह अनुवाद कार्य काफी कुछ अच्छा बन पड़ा है किन्तु इसे भी आदर्श अनुवाद नहीं कहा जा सकता। वास्तव में सृजनात्मक साहित्य का आदर्श अनुवाद हो ही नहीं सकता क्योंकि मूलकृति की भाषायी संस्कृति को लक्ष्य भाषा में अनूदित करना अत्यधिक कठिन है। इस सम्बन्ध में एक उदाहरण दिया जा सकता है। जयरत्न और पी लाल ने प्रेमचन्द के उपन्यास "गोदान" का अंग्रेजी अनुवाद प्रस्तुत किया है। होरी की अन्तिम इच्छा "गोदान" करने की थी। उस "गोदान" शब्द का अनुवाद "गिव द काउ इन चेरिटीं" द्वारा क्या सम्भव है? "गोदान" के पीछे जिस गहरे भारतीय संस्कार, मर्मांतक वेदना और विशिष्ट सांस्कृतिक चेतना की अभिव्यक्ति प्रेमचन्द ने की है वह "गिव द काउ इन चेरिटीं" जैसे अंग्रेजी वाक्यांश से अनूदित नहीं हो सकती। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि प्रत्येक भाषा की अपनी एक सामाजिकता और सांस्कृतिकता होती है, जिसे दूसरी भाषा में यथावत् रूपांतरित नहीं किया जा सकता। इस दृष्टि से काव्यानुवादों के कुछ उदाहरण विचारणीय होंगे।

बी.एल. साहनी ने प्रसाद जी के आँसू और कामायनी का अनुवाद किया है। आँसू की कुछ पंक्तियों का अनुवाद द्रष्टव्य है---

शशि मुख पर घूँघट डाले,	With a thin veil drawn
आँचल में दीप छिपाए	Over thy lunar face
	And a light radiant in the skirts
....	....
कौतूहल से तुम आए	Thou burst on me like curiosity

यहाँ घूँघट का अनुवाद 'thin veil' किया गया है और दीप का radiant तथा आँचल का 'Skirts'। सांस्कृतिक दृष्टि से विचार करें तो उक्त पर्याय समतुल्य प्रतीत नहीं होते हैं। क्या आँचल और 'Skirts' एक ही है?

इसी तरह कामायानी के बी.एल. साहनी, जय किशन दास "सदानीं" तथा मनोहर बंद्योपाध्याय द्वारा अलग–अलग प्रस्तुत किये गये अनुवादों में हिन्दी के अनेक शब्द ऐसे हैं, जिनके लिए ढूँढ़े गये अंग्रेजी पर्याय मूल सांस्कृतिक चेतना को तिरोहित करते हैं। वस्तुतः संस्कृति गर्भित भाषायी इकाइयों का अनुवाद एक जटिल प्रश्न है क्योंकि प्रत्येक

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

भाषा मिथकों, विश्वासों, रूढ़ियों, परम्पराओं और अंधविश्वासों से जकड़ी रहती है और इन सबको दूसरी भाषा में प्रस्तुत करना सम्भव नहीं होता। प्रसाद जी की कामायनी के अंग्रेजी अनुवादों का संदर्भ लें तो अनुवादकों द्वारा प्रयुक्त समतुल्य शब्द और पदबंध मूल तक पहुँचने का असफल प्रयत्न भर लगते हैं। क्या प्रसाद जी का "आनन्द" 'Joy' या 'Bliss' है अथवा "समरस" 'harmonious' या "अखण्ड" 'undivided' या "घना" 'Intense' या "विलसती" 'sported' है? क्या अंग्रेजी की यह शब्दावली हिन्दी की संस्कृतिमूलक शब्दावली का पर्याय कही जा सकती है? क्या प्रेमचन्द का "गोदान" मात्र 'Gift of a cow' है?

नैतिक मूल्यों अथवा धार्मिक कर्मकाण्ड से जुड़ी शब्दावली का अनुवाद और भी कठिन होता है। वेदी/यज्ञ मात्र Bonefire या Holyfire देवदासी God's wife या God's maid servant मात्र नहीं हैं। ये अभिव्यक्तियाँ भारतीय संस्कृति की सुदीर्घ परम्परा एवं रूढ़ियों से सम्बद्ध हैं। भाषा में संस्कृति की जड़ें गहरी होती हैं। प्रत्येक भाषा की सांस्कृतिक अभिव्यक्तियाँ ही दूसरी भाषा से भिन्न नहीं होतीं, वरन् उसकी संरचना (जैविकी)–ध्वनि, शब्द, लय, व्याकरण एवं विन्यास भी भिन्न होती है। भाषा प्रयोक्ता समाज के संस्कारों एवं अनुभवों की रहस्यमय ढंग से सहभागी होती है।यही कारण है कि भाषायी सांस्कृतिक तत्त्वों का अनुवाद हमेशा अपूर्ण होता है फिर भी आज अनुवाद का महत्त्व असंदिग्ध है। आज विज्ञान ने सम्पूर्ण संसार को एक घर बना दिया, दूरियों को मिटा दिया है। अतः विविध संस्कृतियों की पहचान आज की महती आवश्यकता है और भाषान्तरण इस आवश्यकता की सम्पूर्ति का साधन। वस्तुतः अनुवाद भिन्न संस्कृतियों के बीच सेतु का काम करता है और इस तरह विश्व संस्कृति अर्थात् मानव संस्कृति के संवर्धन का उपक्रम भी।

तुलनात्मक साहित्याध्ययन और अनुवाद

भारतीय संविधान निर्माताओं ने हमारे संविधान में जिस सामासिक संस्कृति (कम्पोजिट कल्चर) के संवर्द्धन और संपोषण की संकल्पना की है उसको सुरूपायित करने के लिए तुलनात्मक साहित्य एक महत्त्वपूर्ण उपादान है। वस्तुतः तुलनात्मक साहित्य सांस्कृतिक संश्लेष और भावात्मक एकता का मूल कारक है। भारत विविध संस्कृतियों का देश है और यहाँ अनेक भाषाएँ बोली जाती हैं। ऐसे बहु भाषा–भाषी और अनेक संस्कृतियों वाले देश में, विविध प्रान्तों के लोगों में, सौमनस्य बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि हम विविध भाषाओं के साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करें। इस दृष्टि से भारतीय और भारतीयेतर भाषाओं के हिन्दी और हिन्दीतर अनुवाद ने अनेक भाषाओं और संस्कृतियों वाले इस देश में न केवल "सांस्कृतिक अनेकता में भी एकता" की खोज की है, वरन् विश्वबन्धुत्व और "वसुधैव कुटुम्बकम्" जैसी विराट चेतना को भी मूर्तिमान किया

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

है। अनुवाद साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन की प्रयास–दिशा में मील का पत्थर है। उक्त दृष्टि से अनुप्रेरित होकर इस आलेख में तुलनात्मक साहित्याध्ययन और शिक्षण के कतिपय प्रतिमानों के रेखांकन के साथ ही साथ अध्ययन और शोध के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद की उपादेयता और तुलनात्मक अनुवाद की पद्धति–प्रक्रिया के विश्लेषण–विवेचन का भी उपक्रम किया गया है।

तुलनात्मक साहित्याध्ययन की अवधारणा का विकास और निकास ऐतिहासिक समालोचना पद्धति से माना जाना चाहिए क्योंकि ऐतिहासिक समीक्षा पद्धति ही समीक्षा की प्राचीन पद्धति है और उसके गर्भ से ही तुलनात्मक समीक्षा का सूत्रपात हुआ है। वस्तुतः तुलनात्मक समीक्षा ही तुलनात्मक साहित्याध्ययन के केन्द्र में है। इस संदर्भ में अर्थात् ऐतिहासिक और तुलनात्मक समीक्षा के स्वरूप–विकास के संवंध में अंग्रेजी के प्रख्यात कवि और समालोचक टी.एस. इलियट के विचार विवेच्य हैं। इलियट ने लिखा है– "No poet no artist of any art has his complete meaning alone. His significance, his appreciation is the appreciation of his relation to the dead peots and artists. You can not value him alone; you must set him, for contrast and comparison, among the dead. I mean this as a principle of aesthetic not merely historical criticism. This necessity, that he shall, cohere, is not one–sided; what happens when a new work of art is created is something that happens simultaneously to all the works of art which preceded it."

अर्थात् कोई कवि, किसी कला का कोई कलाकार, अकेले अपनी पूरी अर्थवत्ता सिद्ध नहीं कर पाता। उसकी महत्ता, उसका विवेचन मृत कवियों एवं कलाकारों के साथ उसके संबंध का विवेचन है। उस अकेले (कलाकार) का मूल्यांकन आप नहीं कर सकते–तुलना और वैषम्य के लिए आपको उसे भी मृतों (पूर्व कलाकारों) के साथ रखना होगा। इसे मैं न केवल ऐतिहासिक वरन् सौन्दर्यशास्त्रीय समीक्षा का सिद्धान्त भी मानता हूँ। उसकी सुसंगति (संबद्धता) की आवश्यकता एक पक्षीय नहीं हो सकती। नई कलाकृति के सृजन पर जो घटित होता है वह पूर्ववर्ती कृतियों पर भी युगपत् घटित होता है।" इलियट की इस समीक्षा संबंधी धारणा से स्पष्ट है कि किसी भी कलाकृति अथवा रचना का विवेचन उस परम्परा की पूर्ववर्ती रचनाओं के संदर्भ में तुलनात्मक दृष्टि से किया जाना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। कहना यह है कि सौन्दर्यपरक मूल्य की दृष्टि से दो रचनाओं के बीच साम्य और वैषम्य का उद्घाटन तथा समकालिक और भूतकालिक रचनाओं के संस्कृतिधर्मी अनुप्रभाव और अंतःसंवंध का रेखांकन तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन का प्रमुख घटक है। यहाँ यह कहना भी आवश्यक होगा कि समकालीन और भूतकालीन रचनाएँ एक ही भाषा

---

1. Selected prose, Page. 23.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

और प्रदेश की हो सकती हैं तथा भिन्न भाषाओं और प्रदेशों की भी। सांस्कृतिक अवदान और अनुप्रभाव की दृष्टि से तुलनात्मक अध्ययन दो भिन्न भाषाओं की कृतियों के बीच किया जाना ही अधिक मूल्यवान् होता है। वस्तुतः ऐसे तुलनात्मक अध्ययन के लिए हमें अधिकतर अनुवाद का ही सहारा लेना होता है।

समेकित भारतीय साहित्य की अवधारणा में तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा ही निहित है, क्योंकि जब–जब हम भारतीय उपन्यास पर और भारतीय काव्य पर विचार करते हैं तो हिन्दी, बंगला अथवा हिन्दी–मराठी उपन्यास पर समानान्तर विचार करते हैं। भारतीय उपन्यासों के विकास में बंगला, उड़िया और मराठी उपन्यासों का (ऐतिहासिक उपन्यासों की दृष्टि से) योगदान विशिष्ट है। काव्य के क्षेत्र में भी किसी आधुनिकतावादी आन्दोलन के उद्भव और विकास को समझने के लिए हिन्दी के साथ ही हमें बंगला और तेलुगु पर भी विचार करना होता है।

तुलनात्मक साहित्य शब्द अंग्रेजी के शब्द (काम्परेटिव लिटरेचर) का ही अनुवाद है। "तुलनात्मक साहित्य" की अवधारणा अंग्रेजी, फ्रांसीसी अथवा जर्मन साहित्य के स्वतंत्र अध्ययन तथा ग्रीक और लैटिन से अन्यान्य यूरोपीय भाषा–साहित्यों की तुलना से विकसित हुई है। "काम्परेटिव लिटरेचर" की अवधारणा पश्चिम में भारतीय साहित्य से पूर्व की है। तुलनात्मक साहित्य के क्षेत्र में पश्चिम में हमारे यहाँ से अधिक काम हुआ है। और इस सारे अध्ययन पर यदि विचार किया जाय तो कहा जा सकता है कि तुलनात्मक अध्ययन के चार स्कूल–अंग्रेजी–स्कूल, जर्मन–स्कूल, रूसी–स्कूल और अमरीकी–स्कूल आज तुलनात्मक साहित्याध्ययन के क्षेत्र में अपनी विशिंष्ट प्रणालियों के साथ कार्यरत हैं। हमारे देश में भी तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन का एक विशिष्ट ढाँचा अथवा निश्चित प्रतिमान रेखांकित करने होंगे। अब तक काव्यशास्त्रीय मानदंडों की भाँति हम तुलनात्मक साहित्याध्ययन के प्रतिमान सुनिश्चित नहीं कर पाये हैं। यह प्रतिमान संस्कृतिमूलक हो सकते हैं, ऐतिहासिक, सामाजिक हो सकते हैं, सौन्दर्यशास्त्रीय हो सकते हैं, अनुवादाश्रित हो सकते हैं, संरचनात्मक हो सकते हैं, अथवा साहित्य–समीक्षा की मूलभूत मान्यताओं से अनुस्यूत हो सकते हैं। यद्यपि ऐसे किसी विशिष्ट मानदण्ड को सार्वभौम स्वीकृति नहीं मिल सकती। विद्वानों में मत–मतान्तर तो रहेगा, किन्तु पूर्व निर्धारित मानदंडों के सहारे तुलनात्मक साहित्याध्ययन के क्षेत्र में हम तुलनात्मक शोध का मार्ग प्रशस्त कर सकेंगे।

मूलतः अंग्रेजी शब्द "कम्परेटिव" से अभिप्राय है साम्य और वैषम्य तथा समानधर्मिता का रेखांकन।[1] तुलना पर विशेष बल देते हुए मैक्समुलर ने कहा था कि श्रेष्ठ ज्ञान तुलनाश्रित होता है।[2] रेने वेलेक की दृष्टि में "तुलनात्मक साहित्य" साहित्य के

1. To note point of difference and more specially likeness—and express the resemblance between. –Oxford–Dictionary.
2. All higher knowledge is gained by comparison and rest on comparison. – Max Mullar.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

समग्र रूप का अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में अध्ययन करता है--- साहित्य सृजन और आस्वादन की चेतना जाति-धर्म और भौगोलिक सीमाओं का अतिक्रमण करती है। वह मुक्त, रसमयी और अखण्ड होती है।" तुलनात्मक अध्ययन अंतःसाहित्यिक अध्ययन के साथ ही अंतः ज्ञान का अध्ययन है। वस्तुतः विभिन्न साहित्यों की अंतश्चेतना का तुलनात्मक अध्ययन भी है।

भारतीय साहित्य अर्थात् तुलनात्मक भारतीय साहित्य के इतिहास का रेखांकन सबसे पहले जर्मन विद्वान प्रो. विंटरनित्ज ने किया। उन्होंने ही सबसे पहले भारतीय साहित्य और विश्व-साहित्य पर निबन्ध लिखे। कदाचित् इस पहल से ही तुलनात्मक साहित्य के संदर्भ में ही विश्व-साहित्य की कल्पना सामने आई और 1907 में रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कलकत्ता स्थित राष्ट्रीय शिक्षा परिषद के तत्त्वावधान में "विश्व साहित्य" शीर्षक निबन्ध पढ़ा। तदुपरान्त इसी संस्था के विकसित रूप में जादवपुर विश्वविद्यालय में तुलनात्मक साहित्य का पहला विभाग खुला।[1] पं. जवाहर लाल नेहरू की पुस्तक "भारत एक खोज" समग्र भारत की आत्मा की पहचान की दृष्टि से इतिहास, सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य के तुलनात्मक स्वरूप पर प्रकाश डालती है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि हमारे यहाँ यद्यपि तुलनात्मक साहित्याध्ययन का इतिहास वहुत पुराना तो नहीं है किन्तु है बहुत गहन और तलस्पर्शी। भारत में ऐसे उदाहरण भरे पड़े हैं जहाँ रचनाकार की मातृभाषा भिन्न है लेकिन लिखा उसने दूसरी भाषा में है। बेन्द्रे की मातृभाषा मराठी है जबकि लिखा उन्होंने कन्नड़ में है। रांगेय राघव और मुक्तिबोध, मराठी भाषी होते हुए भी हिन्दी के वहुत वड़े साहित्यकार थे। पश्चिम में ऐसे उदाहरण विरल हैं। अंग्रेजी उपन्यासकार जोजेफ कानरेड अथवा लांजाइनस अपवाद स्वरूप हैं।

भारतीय साहित्य की सार्वभौमिकता का प्रश्न अथवा राष्ट्रीय शिष्ट साहित्य और प्रादेशिक लोक-साहित्य की समस्याओं के मूल में भी तुलनात्मक साहित्य ही है। इस दृष्टि से यह आवश्यक है कि नवीं शती से पूर्व जिस संस्कृत साहित्य की परम्परा थी उसकी तुलना तद्युगीन साहित्य से की जाय, तथा द्रविड़ परिवार की भाषाओं की तुलना संस्कृत साहित्य से की जाय और भारतीयता एवं सार्वभौम भारतीय साहित्य की खोज की जाय। वास्तव में भारतीय स्तर पर एक व्यापक साहित्यिक मंच की आज महती आवश्यकता है। पं. नेहरू ने वैदिक काल से लेकर आधुनिक युग तक के भारत की खोज की थी। तभी उनके मस्तिष्क में भारत का एक संश्लिष्ट रूप उभरा था।

हमारे साहित्य पर हमारे साहित्य और संस्कृति का अथवा पाश्चात्य साहित्य और संस्कृति का कितना प्रभाव है? इसके रेखांकन के लिए भी तुलनात्मक अध्ययन की आवश्यकता है। बंकिम चन्द्र पर वाल्टर स्कॉट का, वृन्दावन लाल वर्मा पर बंकिम चन्द्र और वाल्टर स्कॉट का, माइकिल मधुसूदन दत्त पर होमर और मिल्टन का क्या प्रभाव था?

1. डॉ विजेन्द्र नारायण सिंह के आलेख से।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अथवा मधुसूदन दत्त के "मेघनाद वध" काव्य का मैथिलीशरण गुप्त के "जयद्रथवध" पर भगवतीचरण वर्मा की 'चित्रलेखा' पर अनातोले फ्रांस की "थाया" का क्या प्रभाव है? दोनों में क्या साम्य–वैषम्य है और क्यों? दोनों के कथा–विन्यास और चरित्रांकन के मूल कारक क्या रहे हैं? इन सब बातों का अध्ययन तुलनात्मक साहित्य से ही संभव है।

हिन्दी राजभाषा है और राजभाषा का सम्बन्ध अखिल भारतीय स्तर पर सभी प्रादेशिक भाषाओं से होना नितान्त जरूरी है। यह राजभाषा की स्वीकृति और अस्तित्व का प्रश्न भी है। इसलिए तुलनात्मक शोध और साहित्याध्ययन पर बल दिया जाना चाहिए। इस संदर्भ में यह उल्लेख्य है कि समन्वयात्मक पद्धति से मात्र परिच्छेद मिलाना अथवा कथानक और चरित्र सम्बन्धी तुलना करना तुलनात्मक शोध नहीं है, वरन् भिन्न–भिन्न भाषाओं की रचनाओं के अन्तर्बाह्य साम्य–वैषम्य के मूल कारणों (राजनैतिक–सामाजिक और सांस्कृतिक) का विश्लेषण–विवेचन तुलनात्मक शोध का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। तुलनात्मक अध्ययन और शोध की दृष्टि से एक ही भाषा की दो भिन्न कालिक रचनाओं के अध्ययन की आवश्यकता है। तुलनात्मक अध्ययन का शोध के क्षेत्र में अध्ययन तभी मूल्यवान होता जब अध्येता उन सामाजिक–सांस्कृतिक, राजनैतिक–ऐतिहासिक कारणों की खोज कर सके, जिनकी वजह से एक ही भाषा की और एक ही प्रकार की वस्तु से सम्बद्ध दो भिन्न कालिक रचनाओं में अंतर्वस्तु और शिल्प की दृष्टि से गहरा अंतर है? इस पार्थक्य के लिए समाज–संस्कृति और काल तथा रचनाकार की व्यक्तिचेतना और जातीय चेतना (एदोल्फ तेन के शब्दों में– लरेस, लू मिल्यू, ले मूमेण्ट)[1] कहाँ तक उत्तरदायी है? हिन्दी साहित्य में देखें तो गोस्वामी तुलसीदास से नरेश मेहता तक के राम काव्य में पार्थक्य के मूल कारक क्या हैं? इस पार्थक्य के मूल में पाश्चात्य प्रभाव है अथवा देश–काल और राजनैतिक वातावरण। क्या "कामायनी" में आंतरिक हलचल और विस्फोट के पीछे मिल्टन के "पैराडाइज लॉस्ट" के खलनायक "शैतान" (Satan) का अनुप्रभाव है अथवा पी. बी. शैले के "प्रामीथियस अनवाडण्ड" का?

तुलना की दृष्टि से आर्य और द्रविड़ परिवार की भाषाओं का अध्ययन भारतीय संस्कृति की मूल चेतना की खोज के लिए मूल्यवान हो सकता है। तुलनात्मक अध्ययन का महत्त्वपूर्ण कार्य होगा, राजभाषा हिन्दी का सम्पर्क अन्य भारतीय भाषाओं से अध्ययन और अध्यापन की दृष्टि से सुनिश्चित किया जाय। इस दृष्टि से व्यक्ति रचनाकारों की तुलना, साहित्यिक आन्दोलनों की तुलना, लोक साहित्य की तुलना और विशिष्ट कृतियों की तुलना मूल्यवान होगी। डॉ. लक्ष्मी नारायण लाल का "अंधा कुँआ" और विजय तेंदुलकर का "सखाराम बाइन्डर" की तुलना की जाय तो दो भिन्न भाषाओं और साहित्यों में स्त्री–पुरुष सम्बन्धों के जटिल स्वरूप का रेखांकन होगा। इसी तरह मोहन राकेश के नाटक "आधे

1. फ्रांसीसी समीक्षक एदोल्फ तेन इतिहास, समाज–संस्कृति तथा रचनाकार के अनुवंश (L. Race, L' Milieu, L' Moment) को प्रकारान्तर से रचना में अनुस्यूत और प्रतिफलित मानते थे।

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

अधूरे" तथा तेंदुलकर के नाटक (शान्तता कोर्ट चालू आहे) के बीच मध्यवर्गीय भारतीय स्त्रियों की तस्वीर सामने आती है। इसी तरह कवियों में मराठी कवि एकनाथ और तुलसीदास, सूरदास और वामन पंडित, तुकाराम और कबीर, नामदेव और कबीर, कबीर और रामदास आदि अन्यान्य कवियों के अध्ययन हुए हैं और हो सकते हैं। हिन्दी उर्दू में भी तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है। राष्ट्रीय भावना से ओतप्रोत कवि डॉ. इकबाल और पं. श्रीधर पाठक, चकबस्त और रूपनारायण पाण्डेय आदि तुलनीय रचनाकार हैं। इसी प्रकार गुजराती हिन्दी के भक्ति–आन्दोलन, हिन्दी–कन्नड़ के संत साहित्य आदि विषय भारतीय तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन के अभिन्न अंग हैं। भारतीय साहित्याध्ययन और भारतीय सांस्कृतिक चेतना के रेखांकन के लिए, भावात्मक ऐक्य और सौख्य को रंजित करने के लिए इस अध्ययन की मूल्यवत्ता असंदिग्ध है।

कहा जा चुका है कि भारतीय साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन का मूलाधार अनुवाद है। वस्तुतः अनुवाद ही विश्व मनीषा के अध्ययन का केन्द्रवर्ती बिन्दु है। यदि अनुवाद न होता तो संसार की ज्ञानराशि के गवाक्ष हमारे सामने कभी न खुलते। अतः तुलनात्मक साहित्याध्ययन के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद सर्वथा विचारणीय विषय है।

चूँकि हमारा देश विभिन्न भाषाओं, साहित्यों और संस्कृतियों का देश है और हमारा आग्रह अनेकता में एकता स्थापित करना है, ऐसी स्थिति में अखिल भारतीय साहित्य की अवधारणा ही तुलनात्मक साहित्य की अवधारणा है। और वह मूलतः अनुस्यूत होती है अनुवाद से। अनुवाद ही वह सेतु है जो विविध भारतीय भाषा–साहित्यों में समन्वय, सामंजस्य, एकरूपता तथा सांस्कृतिक संश्लेष तैयार करता है।

तुलनात्मक अनुवाद की अवधारणा के मूल में तुलनात्मक समीक्षा का ही प्राचीन रूप है। दो भिन्न भाषी साहित्यिक कृतियों के अनुवाद की तुलना अथवा एक ही कृति के एक ही लक्ष्य भाषा में भिन्न–भिन्न अनुवादों में संस्कृति के मूलभूत तत्त्वों के रूपान्तरण की दृष्टि से तुलना करना ही तुलनात्मक अनुवाद का अभीष्ट होगा। वस्तुतः अनुवाद और विशेष रूप से तुलनात्मक अनुवाद दो अलग–अलग रचनाओं से संश्लिष्ट जीवन मूल्यों, सांस्कृतिक चेतना और सामाजिक संदर्भों के अंकन का प्रस्थान बिन्दु है। स्रोत भाषा की कृति का लक्ष्य भाषा के विभिन्न अनुवादों में पूर्वकालिकता अथवा समकालिकता की दृष्टि से संस्कृति के भौतिक आध्यात्मिक पक्षों का प्रस्तुतीकरण ही अनुवाद का लक्ष्य होता है। वस्तुतः मूलार्थ और भावार्थ के संक्रमण का संकट अनुवाद में हमेशा बना रहता है। भावार्थ के अंतरण की असंभाव्य स्थिति का प्रस्तुतीकरण अनुवादकों और रचनाकारों ने मध्यकाल से आज तक निरन्तर किया है। 15वीं शती के महानतम् इतालवी कवि दान्ते का विचार था कि काव्यानुवाद में माधुर्य नष्ट हो जाता है। कृति में अनुस्यूत सांस्कृतिक तत्त्व अनुवाद में नष्ट हो जाते हैं। इसी तरह 18वीं शती में अंग्रेजी के प्रसिद्ध विद्वान सैमुअल जानसन की मान्यता थी कि काव्य का अनुवाद हो ही नहीं सकता। 20वीं शती में रिचर्ड्स ने घोषणा की कि

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

"अनुवाद इस ब्रह्माण्ड की सबसे जटिल क्रियाओं में से एक है।" पीटर न्यूमार्क का कथन है कि "अनुवाद से शतप्रतिशत अर्थ सम्प्रेषित नहीं होता, कभी अर्थ का विस्तार हो जाता है तो कभी अर्थ का संकोच।" इस दृष्टि से हिन्दी के महाकवि सूरदास, तुलसीदास, कबीर आदि की दर्शन प्रधान भावधारा का, अंग्रेजी के महाकवि विलियम वर्ड्सवर्थ की रहस्यमयी वाग्धारा का अनुवाद एक जटिल कार्य है किन्तु साथ ही नितान्त आवश्यक भी। यदि अनुवाद न हो तो संसार के महान कवियों, रचनाकारों, दार्शनिकों, तत्त्व मीमांसकों, धर्माचार्यों, भूवैज्ञानिकों आदि द्वारा प्रस्तावित, प्रतिपादित और शोधित विशिष्ट ज्ञान और विशिष्ट सामाजिक–सांस्कृतिक विचारधाराओं से हम वंचित ही रह जाएँगे। अतः यह निर्विवाद रूप से सत्य है कि सांस्कृतिक आदान–प्रदान, भावात्मक एकता, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों की धुरी है अनुवाद और तुलनात्मक साहित्य का केन्द्र बिन्दु भी अनुवाद ही है।

ON TRANSLATING CREATIVE LITERATURE

Human society and language appear to be related so inseparably that we feel the relation between the two is just natural. We cannot imagine one without the other. Language is a means of communication with other members of the community. But when a monolingual happens to be in a community, where some language other than he speaks is used, he realises that his own language is inadequate to establish any sort of communication with the members of that community. In such a situation to establish any communication, there are only two options open to him, viz., he may learn the other language or he should take resort of translation.

Translation is a world–wide phenomenon. Historically it dates back to ancient times when races and ethnic groups came in contact with one another and developments of human cultures and civilization occurred. A prominent feature of Indian social organization has been that more importance is given to religion, scriptures, culture and literature as a whole. There are many languages in India and each person considers his language and literature to be the paragon of beauty and sweet sounding of all. In such a state of affairs to maintain the Unity in Diversity the role of translation is paramount. Today in the world of literary production, translation has a unique relevance and reference. Paul Engle in his preface to contemporary French poetry, has very aptly remarked that as the World Shrinks, the need of translation expands. It seems likely that in the present century, each country will have not one

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

but two literatures: the one produced by its own writers and other translated from the world languages. This secondary literature (translated literature) will often have the most immediate and energizing effect on writers of the language into which it has been translated.[1] Translation is a bridge between different regions, countries, languages and cultures. It is a Kaleisdoscope of world culture. It has brought the internationalism in the realm of creative literature and transmission of world culture.

The subjects for the attention in the field of translation are: whether translation should be literal or free, whether it should concentrate on content or form, on meaning or on style and in the translation of poetry the priority should be given to the rhythm or the spirit, whether the attention and emphasis be put on cultural contexts incorporated by the author of the original text of the source language. Proper attention has also not been paid on cultural transference in translation, its contribution in unifying people of different communities, caste and creeds, different language groups. A translator has to face several problems in restituting cultural context of the source language into the target language. Challenges, one has to face on translating literary texts, are innumberable. One has to possess the deep insight and background knowledge of the source language in order to prepare a culturally successful translation by which I mean that it (translation) should reflect the culture of the people of the original text for the benefit of target readership. In this way translation (with reference to creative literature) is a challenging and difficult task.[2]

As literature is the mirror of society, so culture is the mirror of literature. Here culture denotes the complex collection of human experiences which are represented in history, socio–economic structure of society, religion and faith of the people. Their customs, traditions, rituals, thinking and behaviour at large. It even goes deep into the inter-relationships between the various social classes, races and communities. It is a flux with various fusions. All branches of literature represent some aspects of culture. More sublime works like an epic and novel are important for translation because they reveal the spirit of culture out of which they grew.

1. Paul Engle: Contemporary French poetry (Ed. Aspel and Donald Justice–1965)
2. Translation is one of the most difficult activities of the Cosmos – I.A. Richards

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Literature depicts social reality. Apparently literature is a social institution using language as its medium. Language is the living material of literature. It is living in the sense that it is in itself creation of human species and, thus, is charged with the cultural heritage of a linguistic group. Thousands of such groups are in the world and they communicate with each other through the medium of translation. Culture exists in a language through its symbols and imagery. Translation of this complex and complicated aspects of source language into target language is very difficult and some time illusive.

In this respect, Eugene A. Nida advises socio linguistic approach of translation because socio–linguistic translation would be to explicate the cultural context of the source work. Cultural context is not always entirely identifiable with the language, often, it is intricately woven into the texture of the language which only a sensitive translator can make out. Culture, even though elusive, is a necessary ingredient of a successful translation.

In literary works, words, overladden with cultural connotation, are easy to detect but difficult to translate. If the translator is not well-versed in target and source languages and culturally not sensitive, he may distort the meaning and make the translation ridiculously clumsy e.g., Hindi words 'Atamj or Atamaja" cannot be translated in English as born of soul, but should be translated as 'son' and 'daughter '. In such cases, a functional equivalent is a better solution or some time even a discreet ommission of the phrase. Take for instance, the common western way of addressing one's wife as 'Sweet heart', 'Honey' 'Charie' should not literally be translated in Hindi as 'Madhura Hriday' 'Shahd' 'Cheire' etc but with 'Priyatama' 'Patni' etc. Here translator faces the problem because of a ćultural gap' a 'distance' between the S.L. and T.L.

E.A. Nida has suggested that translator should educate himself anthropologically so that the proper equivalence could be maintained. Words are fundamentally symbols for cultural features. Accordingly, a translator must take pains to be familiar with the cultural situation in both the languages and must use words designating the closest equivalence in order to be convincing. Culture has many dimensions and aspects, but some of them as ecological, geographical, materialistic and social, religious and linguistic are important. Disperate geographical

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

features and the extremely ecological variation from territory to territory often possess considerable difficulty in finding the equivalent words and terminology. Nida has given some passages from Bible, where there is a mention of fig tree, new leaves, rain, desert, river etc. . These words have mythological references, hence make it difficult to find equivalent words. In such a situation a translator should retain the original words and describe their meaning in the foot-note. Words connected with food, clothes, dishes, housing, transport and communication can cause complex problems. Names of Indian dishes 'Kheer' 'Pakoda', 'Dahi Bara' Gulab Jamun' ,'Gazak' etc. have no equivalent in English. So is the case with French, Chinese, English food and dishes. Clothes when distinctively national, as–Kaften 'Kimoni', Sarong (South Seas) 'Anarka' (Africa) and 'Dhoti Kurta' 'Angarkha' 'Lahanga' from India– have no equivalent words in other languages. In the same manner, names of the houses are also distinctive in different countries–as– 'Pandal', 'Jhuggi–Jhopari' in India 'Saloon' in French.

Transport is peculiar in American English. American English has twenty-six words for car, but in India there is only one word Car. Species of flora and fauna remain local and cultural and cannot be translated. Words denoting social customs and religious rituals pose a problem for translator. Hindi words 'Karma' , 'Dharma', 'Moksha', 'Sati' 'Vedi' 'Yagna' 'Yagnpavit' etc. do not have equivalents in English. Similarily 'Courtship' has no equivalent in Hindi. Words denoting culture have an important place in epics, novels, dramas and also in other literary forms and pose a threat or challenge for the translator translating creative literature. George Steiner has said–The translator invades, extracts, brings home and finally undertakes the act of restitution.

Words are important in translation, but on translating creative literature, they (words) alone do not constitute it. It is not the dictionary, but the diction which matters in translation of poetic works. Hence translators of peotry have to depend not only on translation, but on transcreation too. Edward Fitzgerald, the master translator of seventy five Rubaiyat of Omar Khayyam has very aptly remarked that "a live sparrow is better than a dead eagle." Translation of creative literature is the fusion of half translation and half transcreation. Hence translation of a creative work is a hard nut to crack.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

"Total fidelity is also unfaithfulness in translation, says william Cowper. Translation of poetry is like listening to and rendering of the wandering and the whispering winds. Victor Kierman is of the opinion—"All translation of poetry is only a tiny window, allowing only a certain quantity of light to pass through it." The fact, however, remains that the greatest of creative writers and the most sensitive of poets can not be translated absolutely. Dr. Johnson was of the view that poetry can not be translated. These statements throw light on the translatability of the creative literature.

The translation of a particular creative work or poem varies from one translator to another because it is the question of translatability and creativity of the translator. In Hindi four great poets–Maihili Sharan Gupta, Sumitranandan Pant, Mahadevi Verma and Harivansh Rai Bacchan–have translated the Rubaiyat of Omar Khayyam; but their translation differ not only in style and diction, but also in deep insight and content. It shows that translation of creative literature have no absolute correspondence between the original and that of the translated text. Translator has to opt the way of transcreation, because he tries to bridge the gap between two cultures–culture of the source language literature and that of target language literature.

It is not the ingredients and components of a particualar culture pervaded in the target language and literature which hamper the translation of literary work but there are certain other challenges too. To translate the metre, rhythm, word power, suggestivity, symbolism, imagery and poetic diction is certainly a big challenge. Sometimes a translator has to coin the meter, as in the case of translating Omar Khayyam Fitzgerald coined the metre in English.

But all the above challenges of translating creative literature do not make its future bleak. Hurbert G. Alexander is of the view– 'This is the question of translatability from one language into another. Since one language carves experiences in a somewhat different way from another language, many of the terms used in the one will coincide precisely in their extensions to the nearest corresponding terms in the other.

The most important part of the translation of creative literature is the translation of cultural heritage of one language into another. Through translation we know the cultural heritage of the world. "In

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

effect one does not translate languages, one translates cultures. That, it is possible to translate one language into another at all, attests to the universalities in culture, to common vicissitudes of human life and to the like capabilities of men throughout the earth as well as to the inherent nature of language and the character of the communication process itself, and a cynic might add to the arrogance of the translator also. Thus the ethics of translator demand that the act of translation, which transfers a literary text from one language into another, also means an exchange of one culture with another and this cultural exchange through translation will always be beneficial to the humanity. Hence while talking of translation of creative literature, it is perhaps not very fruitful to look at the merits and demerits of a translation in absolute terms in relation to original. What is likely to be more relevant is to assess a given translation in relation to cultural transference.

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC.0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

सत्य देव मिश्र

शिक्षा : एम.ए. हिन्दी एवं एम.ए. अंग्रेजी, पीएच.डी. हिन्दी एवं पीएच.डी. अंग्रेजी, पत्रकारिता में उपाधिपत्र।

प्रकाशित कृतियाँ : पाश्चात्य समीक्षा : सिद्धान्त और वाद, शुक्लोत्तर हिन्दी आलोचना पर पाश्चात्य साहित्यिक अवधारणाओं का प्रभाव, रसखान रचनावली, समीक्षा के विविध आयामः राम की शक्ति पूजा के विशेष संदर्भ में, अनुवाद प्रविधि, संक्षिप्त पारिभाषिक शब्द संग्रह, साहित्येतिहास दर्शन, हिन्दी का अपना काव्यशास्त्र, अनुवाद : अवधारणा और आयाम, अनुवाद : समस्याएँ और समाधान एवं सौ आलेख एवं रेडियो वार्ताएँ।

प्रकाश्यः दुभाषिया प्रविधि, पाश्चात्य काव्य शास्त्र कोश, पाश्चात्य काव्य समीक्षा का अधुनातन स्वरूप, Verse Drama : English and Hindi.

सम्प्रति : वरिष्ठ रीडर एवं प्रभारी, एम.ए. अनुवाद पाठ्यक्रम, हिन्दी तथा आधुनिक भारतीय भाषा विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय।

सम्पर्क–सूत्रः 18, रीडर्स फ्लैट्स, फैजाबाद रोड, विश्वविद्यालय परिसर, लखनऊ–226020

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji

CC-0 Digitized by Arya Samaj Foundation, Chennai and eGangotri

हमारे अन्य हिन्दी भाषा, व्याकरण, निबन्ध एवं अनुवाद विज्ञान संबंधी ग्रन्थ

हिन्दी भाषा, व्याकरण और निबन्ध रचना	डॉ हरिश्चन्द्र पाठक	195.00 छात्र संस्करण 60.00
प्रयोजनमूलक मानक हिन्दी	ओंकार नाथ वर्मा	300.00
अनुवाद : अवधारणा और आयाम	डॉ. सत्यदेव मिश्र एवं डॉ. रामाश्रय सविता	125.00
अनुवाद : समस्याएँ और समाधान	"	125.00
साहित्यिक निबन्ध	डॉ. ऊषा चौधरी	125.00
सुलभ प्रतियोगितात्मक निबन्ध	राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव	150.00
प्रारूपण, शासकीय पत्राचार और टिप्पण-लेखन विधि	राजेन्द्र प्रसाद श्रीवास्तव	200.00 छात्र संस्करण 60.00
समसामयिक भाषा विज्ञान	डॉ. कविता रस्तोगी	300.00
प्रयोजनपरक हिन्दी	प्रो. सूर्य प्रसाद दीक्षित एवं डॉ. योगन्द्र प्रताप सिंह	125.00 छात्र संस्करण 50.00
कार्यालयीन थेसॉरस	राम इकबाल सिंह एवं अन्य	50.00

भारत प्रकाशन
17, अशोक मार्ग,
लखनऊ – 226001

Vidya Niwas Mishra Collection, Varanasi. Courtesy. Dayanidhi Mishra ji